सम्बन्ध है मानना मात्र है और मान्यताएं तो बदलती ही रहती हैं। अतएव जीव का नित्य सम्बन्ध किसी से भी नहीं है। वह वासना छोड़कर आज ही सबसे मुक्त हो जाता है। सबके राग से छूट जाना ही आज प्रत्यक्ष मोक्ष है। मोक्ष को समझने के लिए अपने आप में भी भक्ति, वैराग्य एवं साधना की योग्यता अर्जित करना पड़ता है। कक्षा एक का लड़का एम० ए० का विषय नहीं समझ सकता।

461. प्रश्न—जीव का घर क्या है?

उत्तर—उसका अपना चेतन स्वरूप। अपना असली घर वही है जो कभी अपने से पृथक न हो। बाहर के घर पृथक हो जाते, छूट जाते हैं। परन्तु अपने आत्मा से हम स्वयं अलग नहीं हो सकते। मैं को छोड़कर मैं कभी नहीं रहता। सुषुप्ति अवस्था में किसी की आवाज सुनकर मैं ही जागता और उसे उत्तर देता हूं। अतएव जीव का सम्बन्ध केवल जीव से ही है। उसका बाहर का सारा सम्बन्ध झूठा है। अतएव जीव का घर उसका अपना चेतन स्वरूप ही है ''नित पारख प्रकाश जो, सोई निज घर जान।'' (पंचग्रंथी)

462. प्रश्न—हम कैसे कह सकते हैं कि अन्य खानियों में वासना नहीं होती?

उत्तर—जीवन-निर्वाह के धंधे एवं विषयों की वासनाएं तो सब खानियों में होती हैं, परन्तु विशेष पाप-पुण्य की वासना मनुष्य से भिन्न खानियों में नहीं बनती, क्योंकि वहां भले-बुरे का अधिक ज्ञान नहीं है।

463. प्रश्न—निज स्वरूप के दर्शन कैसे हों?

उत्तर—निज स्वरूप के दर्शन नहीं होते। निज स्वरूप तो द्रष्टा है। द्रष्टा दृश्य में कैसे आ सकता है? अपने आप को सबका द्रष्टा समझकर और सारे दृश्यों से लौटकर अपने आप में आ जाना ही निज स्वरूप के दर्शन हैं। इसके लिए अनासक्ति, वैराग्य, स्वरूपज्ञान तथा महापुरुषों की सेवा की जरूरत है।

464. प्रश्न—मानव या पशु के शरीर में फोड़ा या रोग हो जाने पर उनमें कीड़े पड़ जायें तो दवाई करनी चाहिए कि नहीं?

उत्तर—मानव या पशु के शरीर में फोड़ा या रोग हो जाने पर उनमें कीड़े पड़ जायेंगे तो दवाई करनी ही पड़ेगी। जिस पशु को तुम पाल रखे हो उसकी सेवा करना कर्तव्य है। न सेवा कर सको तो न रखो। हां, अपने शरीर में रोग हो, कीड़े पड़ें तो उसमें चाहो दवाई न छोड़ो। इसी प्रकार खेत की फसल में तुम चाहो दवाई छोड़ो या न छोड़ो, स्वतन्त्र हो। जो अपना व्यक्तिगत है, उसमें स्वतन्त्र हो।

* * *

465. प्रश्न—मानसिक तनाव क्यों होता है?

उत्तर—अविवेक के कारण और तथ्य को न समझ पाने से मानसिक तनाव होता है। शरीर की नश्वरता, मलिनता, जड़ता और दुखरूपता का ज्ञान न होने से तथा काम-भोग के भयंकर परिणाम की अन्तर दृष्टि न होने से हम कामवासना के मानसिक तनाव में पड़ते हैं। हमारा अन्ततः किसी प्राणी से कोई सम्बन्ध न होने से हमें किसी से राग और द्वेष नहीं करना चाहिए। विवेक न होने से प्राणियों में अहंता-ममता बनाकर हम राग-द्वेष के मानसिक तनाव में पड़ते हैं। वर्तमान में खाना-पीना और दूसरे की सेवा में खर्च करना धन का सही उपयोग है। इस बात को न समझकर लोभ के विषय में तनाव होता है। कोई दूसरा व्यक्ति हमारी आध्यात्मिक हानि नहीं कर सकता है। यदि हमें कोई बुरा कहता है, हमारा विरोध करता है, हमारा अपयश फैलाता है तो निश्चय हम से उसके प्रति कोई गलती हो गयी होगी, या उसे हमारे सम्बन्ध में कुछ व्यर्थ भ्रम हुआ होगा, या वह ईर्ष्या के वश होगा। सब प्रकार वह क्षमा का पात्र है। यदि हमने उसके प्रति कोई गलती की है तो उसके मन में हमारे प्रति प्रतिकार की भावना होना स्वाभाविक है। यदि वह भ्रम या ईर्ष्या के वश है तो अबोध है और इस प्रकार किसी प्रकार से कोई हमारी बुराई करे तो वह क्षम्य है। जब हमारी कोई आध्यात्मिक हानि कर ही नहीं सकता, तब हम किसी से वैर या मानसिक तनाव क्यों रखें! अतएव अविवेक मिटकर विवेक की पूर्ण प्रतिष्ठा हो जाने पर मानसिक तनाव मिट जाता है।

466. प्रश्न—शरीर में मन बलवान लगता है और वह हमें विपथ में ले जाता है। क्या इस शरीर में मन से भी कोई बलवान है?

उत्तर—मन से बलवान जीव है जो चेतन स्वरूप है और वही तुम हो। अर्थात तुम मन से भिन्न और उससे बलवान हो। तुम दृढ़ संकल्पपूर्वक लग जाओ तो मन को अपने वश में कर सकते हो।

467. प्रश्न—हम आप लोगों की तरह बनना चाहते हैं, परन्तु परिवार के लोग हमें बनने नहीं देते?

उत्तर—तुम्हारी उन्नति के मार्ग में कोई दूसरा रोड़ा है यह समझना गहरी भूल है। तुम जहां पर रहते हो, वहीं परिवार की सेवा करते हुए मन को निर्मल बनाओ। इसके लिए सद्ग्रंथों का अध्ययन, सत्संग एवं सद्विचार साधन हैं। फिर साधु-संग भी करो।

468. प्रश्न—मनुष्य का मुख्य कर्तव्य स्वरूपज्ञान तथा मोक्ष की प्राप्ति ही है या संसार से अनाचार की समाप्ति करना भी?

उत्तर—जो व्यक्ति स्वरूपज्ञान प्राप्त करके जीवन्मुक्त हो जायेगा उसके जीवन से अनाचार का अन्त हो ही जायेगा और उसके आदर्श एवं प्रेरणा से दूसरे के अनाचारों का अन्त होगा। अनाचार अन्त करने का यही रास्ता है न कि केवल लेक्चरबाजी।

469. प्रश्न—हर सम्प्रदाय के लोग अपने मतप्रवर्तक को भगवान मानकर उनके तथा अन्य अनेक कल्पित देवी-देवताओं की आड़ में अधर्म भी करते हैं। इस काम से उनकी अन्तरात्मा क्यों नहीं रोकती?

उत्तर—अन्तरात्मा की आवाज को सुनने के लिए विनम्रता, निष्पक्षता तथा निर्मलता की आवश्यकता है।

470. प्रश्न—हराम की कमाई हराम में ही चली जाती है कि कहीं काम में भी आ जाती है?

उत्तर—हराम की कमाई करो ही मत। यदि किसी ने पहले कर ली है तो उसे अच्छे काम में लगा दे।

471. प्रश्न—इसका पता कैसे लगे कि कौन बदला दे रहा तथा कौन ले रहा है? अपने कर्मों का बदला जीव को चौरासी में ही मिलता है कि मनुष्य तन में आकर?

उत्तर—तुम मन, वाणी तथा कर्मों से किसी को दुख मत दो। यदि किसी द्वारा तुम्हें दुख मिले, तो उसे अपने ही बुरे कर्मों का फल समझो। अपने कर्मों का फल मिलेगा चाहे देर चाहे सबेर, चाहे नर तन में और चाहे अन्य योनि में।

472. प्रश्न—सुखद आहार-विहार क्या है?

उत्तर—सात्विक और सन्तुलित आहार तथा मन को एकाग्रता देने वाला सदाचार।

473. प्रश्न—मनुष्य व्यर्थ खर्च कब करता है?

उत्तर—जब पाप की कमाई करता है।

474. प्रश्न—इस जीवात्मा को तो केवल इस जगत की सीमित जानकारी होती है, जहां तक उसकी परिछिन्न वृत्ति पहुंचती है। समस्त जानकारी किस तत्त्व को है, वह हमारे लिए क्या करता है, कहां है?

उत्तर—अल्पज्ञ हो या बहुज्ञ, यह देहधारी जीव ही ज्ञाता है। अनन्त ब्रह्मांड के कण-कण का कोई ज्ञाता होगा, यह निरी कल्पना है। सूखा, दाहा, पाप, ताप और द्वन्द्व से पिसते हुए संसार को देखकर सर्वज्ञ तथा सर्वशक्तिमान की

कल्पना अपने आप ध्वस्त हो जाती है। जड़-तत्त्वों के अनादि गुण-स्वभावों एवं उनके नित्य विधानों एवं नित्य जीवों के कर्म संस्कारों के अनुसार जड़-चेतनात्मक सृष्टि अपने आप चल रही है। व्यक्ति को चाहिए कि वह अपने आप चेतन स्वरूप को जड़ प्रकृति से पृथक समझकर, विषय-मोह से अपने आपको छुड़ाये, व्यर्थ बातों के सोचने में समय न बिताये।

475. प्रश्न—पानी नहीं बरसने से देश सूखे से परेशान है। क्या कोई शक्ति नहीं है जो पानी बरसा दे?

उत्तर—जिस शक्ति से पानी बरसता है वह जड़-प्रकृति है। उसको ज्ञान नहीं है। उसकी अपनी स्वाभाविक योग्यता से पानी बरसता है। यदि पानी बरसाने वाला कोई द्रष्टा चेतन हो, तो वह ऐसा निर्दय नहीं हो सकता। जिस सूखे से जनता की दशा देखकर एक कसाई भी पिघल जाता है, वह कैसे नहीं पिघलता? पंडित, मौलवी तथा पादरियों को यह ज्ञान आज तक नहीं हुआ कि पानी बरसने का कारण जड़-प्रकृति है, कोई चेतन सत्ता नहीं; और पानी बरसाने के लिए ये हवन, प्रार्थना करते और नमाज पढ़ते जाते हैं।

476. प्रश्न—आत्मचिंतन में मन का भाव रहता है कि अभाव। चिंतन तो मन ही से होता है?

उत्तर—आत्मचिंतन में मन का भाव रहता है, परन्तु वह शुद्ध, शांत, सरल और सुखद होता है। उसके ऊपर एक दशा ऐसी होती है, जब आत्मचिंतन भी न करके केवल मन का द्रष्टा बनकर उसे एकदम संकल्परहित कर दिया जाता है। यहां पर मन का अभाव रहता है।

477. प्रश्न—जीव के पैर-पंख हैं नहीं। वह कैसे दूसरे जन्म में जाता है?

उत्तर—वासना द्वारा।

478. प्रश्न—हम विषयों से मुड़कर अन्तर्मुख क्यों नहीं होते?

उत्तर—विषयों का अनादि अभ्यास है और अन्तर्मुख का अभ्यास नया है। दूसरी बात, पूरी लगन का अभाव है। तीसरी बात, पूरी लगन होने पर भी मन के अन्तर्मुख होने में कुछ समय तो लगेगा ही। चौथी बात, प्रपंच तथा संसारियों से हटकर समय-समय से साधु संगत की आवश्यकता है। खूब सद्ग्रंथ भी पढ़ो और साधु संग करो। साधु का मतलब केवल वेषधारी नहीं, किन्तु साधना-सम्पन्न है।

479. प्रश्न—शुभाशुभ दोनों कर्म बन्धन हैं क्योंकि शुभ कर्म में भी उसका आभास तो रहता ही है, तो क्या शुभ कर्म भी त्याग देना चाहिए?

उत्तर—साधारण मनुष्य तो अशुभ कर्मों का त्याग कर दे, इतना ही बहुत है। बिना कर्म किये जीवन चल नहीं सकता। कर्मरहित कोई हो भी नहीं सकता। कुछ-न-कुछ सबको करना है। यदि व्यक्ति शुभ नहीं करेगा तो उससे अशुभ होगा। अतएव अशुभ कर्म छोड़कर शुभ कर्मों में जीवन व्यतीत करना है।

अब रही बात कि 'शुभ-कर्मों की भी वासना बनेगी, जो बन्धनप्रद होगी।' अहंकार और विषय-भोगों की कामना का त्याग कर देने पर शुभ कर्मों की वासना नहीं बनेगी। स्थूल मैथुनक्रिया से लेकर पूजा-प्रतिष्ठा पाने तक की लालसा विषय-भोगों की कामना है। विवेकवान इसका त्याग कर देता है और किसी शुभकर्म में उसको अहंकार नहीं रहता। अतएव शुभकर्मों को करते हुए भी वह उनके बन्धनों में नहीं पड़ता। शुभ कर्मों का आभास (प्रतीत) मात्र बन्धन हो जाये, तो शरीर और संसार का आभास जीवन भर रहता है। फिर कोई मुक्त हो ही नहीं सकता। विवेक द्वारा अनासक्त होकर ही बन्धनों से छुटकारा है। शरीर रहते कोई आभास एवं प्रतीत को नहीं मिटा सकता।

480. प्रश्न—किसी भी मनुष्य को गुरुमुख क्यों, कब और किससे होना चाहिए? शिष्य और गुरु के कर्तव्य क्या हैं?

उत्तर—आध्यात्मिक खोज एवं स्व-स्वरूप ज्ञान की जब व्यक्ति में जिज्ञासा होती है, तब वह स्वयं सच्चे गुरु की खोज करता है। वह, जिसके द्वारा पूर्ण आध्यात्मिक सन्तोष मिलता है, उसे गुरु स्वीकार कर लेता है। समर्पण भावना शिष्यत्व है और यथार्थ ज्ञान तथा दिव्य रहनी में सम्पन्न होना गुरुत्व है।

गुरु बोधिक निज थीर पद, डोले कतहूँ नाहिं।
आपु सुखी औरे सुखी, सद्गुरु कहिये ताहि॥

(पंचग्रन्थी, गुरुबोध, दोहा 62)

481. प्रश्न—कबीर एक उच्चकोटि के संतपुरुष थे। वे निराकार की उपासना कर सके, साधारण जनता तो साकार की ही उपासना कर सकती है। क्या निराकार-उपासना का उपदेश समाज को गति दे सकता है?

उत्तर—कबीर देव निराकार-निर्गुण नहीं, साकार-सगुण के उपासक थे। निराकार-निर्गुण का तो कुछ अर्थ नहीं होता। निराकार-निर्गुण रोटी-भात से पेट भरने वाला नहीं। रहा, सगुण-साकार के नाम पर लोग केवल जड़ पत्थर या अष्ट धातु की मूर्ति मात्र मान लेते हैं, जो भ्रम है। वस्तुतः यह प्राणिजगत जो चैतन्य मूर्ति है, सगुण-साकार है, इसकी सेवा करना, इसके प्रति मन में करुणा और प्रेम रखना—साकार-सगुण की उपासना है। मानव में जो ज्ञान सम्पन्न और

पवित्र हैं उन्हें हम संत कहते हैं। वे कल्याणार्थियों के महान अनुशास्ता, प्रेरक और रक्षक हैं। उनमें श्रद्धा तथा सेवा-भावना रखना प्रत्यक्ष साकार एवं सगुण उपासना है। व्यक्ति का अपना आत्मस्वरूप चेतन है। वह ज्ञानाकार तथा ज्ञानगुण सम्पन्न होने से एक प्रकार साकार तथा सगुण ही है। अत: स्वरूपज्ञान तथा स्वरूपस्थिति साकार-सगुण उपासना ही है। इस प्रकार प्राणि मात्र के प्रति करुणा, निर्मल संतों के प्रति श्रद्धा एवं स्वरूपज्ञान तथा स्वरूपस्थिति—कबीर-उपेदश की यही उपासना-पद्धति है, जो एकदम व्यावहारिक और समाज के लिए गतिप्रद है।

482. प्रश्न—ध्यान किसे कहते हैं, ध्यान किसका और कब करना चाहिए, ध्यान करने से क्या लाभ है, ध्यान करने की विधि क्या है?

उत्तर—मन का निर्विषय, संकल्प-शून्य हो जाना ध्यान है। किसी महापुरुष का ध्यान करने का मतलब यह है कि पहले एकाएक मन निर्विषय तथा संकल्पशून्य हो नहीं सकता, इसलिए पहले एकाग्रता के लिए किसी महापुरुष का भी ध्यान ठीक है, परन्तु यह है एक विषय का ग्रहण ही, भले वह शुद्ध विषय है।

प्रात: और सायं ध्यान करने का अच्छा समय है। प्रात: अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वैसे जब समय मिले ध्यान करना चाहिए। ध्यान अर्थात एकाग्रता की प्राप्ति सर्वोच्च सुख है। जो व्यक्ति ध्यान परायण हो जाता है उसका मानसिक तनाव समाप्त हो जाता है। उसे एकाग्रता एवं शांति की प्राप्ति होती है। वह सन्तुलित मन वाला हो जाता है और ऐसा व्यक्ति भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों सुखों का भागी होता है। अर्थात एकाग्रता का अच्छा प्रभाव शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ता है। आरम्भिक साधना में किसी वैराग्यवान सन्त-पुरुष का ध्यान करना चाहिए या जिसको जो इष्ट हो। वैसे सच्चा ध्यान संकल्पों का अन्त है। इस विषय को विस्तार से समझने के लिए 'ध्यान क्या है' पढ़ें।

* * *

483. प्रश्न—धर्म साहेब के अनुयायियों तथा पारख सिद्धान्त में क्या भेद है? कबीर साहेब तो एक थे, उनके चार मुख्य अनुयायी—श्री धर्म साहेब, श्री श्रुतिगोपाल साहेब, श्री भगवान साहेब तथा श्री जागू साहेब के अनुयायियों में मतभेद क्यों?

उत्तर—संसार का स्वभाव है विभिन्नता। एक वादरायण के ब्रह्मसूत्र का भाष्य शंकर, रामानुज, माधव, बल्लभ भिन्न-भिन्न तरीके से करते हैं। एक शंकराचार्य के अनुयायी ही भिन्न विचारों वाले हैं। उनके अद्वैतवाद में आज से

चार सौ वर्ष पूर्व ही तैंतालीस (43) मत हो गये थे, जिन्हें आप अप्पयदीक्षित के सिद्धांतलेश संग्रह नामक ग्रंथ में देख सकते हैं।

सद्गुरु कबीर के श्रुतिगोपाल साहेब आदि उक्त चार शिष्य मुख्य माने जाते हैं और चारों की परम्परा में पारख सिद्धान्त के विचारक रहते थे। धर्म साहेब भक्तिपक्ष को लेकर समाज को ज्यादा प्रभावित किये। उनके अनुयायी भी चाहे जिस प्रकार से सही, भक्ति, महिमा और उपासना का पक्ष लेकर समाज को सर्वाधिक प्रभावित किये और विपुल ग्रंथों की रचना किये। इतना होने पर भी पारख सिद्धान्त की वहां वरीयता रही और कबीरमंशूर जैसे महिमापरक विशाल ग्रन्थ में भी एक प्रकरण पारख सिद्धान्त का साफ-साफ रखा गया। अतएव पारख सिद्धान्त पूरे कबीरपंथ में व्याप्त और कबीरपन्थ का सार है। उसका कबीरपन्थ की किसी शाखा से विरोध नहीं, किन्तु उन सभी शाखाओं में वह पनप कर बढ़ा है। श्रुतिगोपाल साहेब का कबीरचौरा काशी, भगवान साहेब का धनौती मठ, फतुहा, पावा, विद्दूपुर, आदि पारख सिद्धान्त के गढ़ रहे ही, जहां से प्रेरणा पाकर गुरुदयाल साहेब, रामरहस साहेब, मेंही साहेब, राघव साहेब, कुंजल साहेब आदि पारखी संत होते रहे। धर्म साहेब की परम्परा में भी पारखी संत आज तक होते आये हैं।

पारख किसी की बपौती नहीं है। जीव का स्वरूप ही पारख अर्थात ज्ञान है। जो सब की पारख करके उसे त्याग दे और ज्ञानस्वरूप में स्थित हो जाये वही पारखी। अतएव कबीरपन्थ क्या पारख सिद्धान्त पर मनुष्य मात्र का अधिकार है। कोई पारखी कहलाकर भी यदि पारख ज्ञान न धारण करे तो वह पारखी नहीं।

484. प्रश्न—इसाई, मुसलमान, पारसी, जैन, बौद्ध आदि अपने एक देवता, खुदा आदि को मानते हैं, परन्तु हिन्दुओं में अनेक देवताओं के मानने वाले लोग हैं। कोई शिव को मानता, कोई राम को, कोई कृष्ण को मानता, कोई हनुमान को, कोई काली को मानता, कोई दुर्गा को। ऐसा क्यों?

उत्तर—सभी परम्पराओं से हिन्दू परम्परा बहुत पुरानी है। इसने काल की एक लम्बी अवधि देखी है। भिन्न-भिन्न काल में उदय हुए महापुरुष एवं काल्पनिक देवता इसमें समाहित होते चले गये हैं। हिन्दू समाज सदैव से ही लोचदार रहा है। इसकी सर्वग्राही दृष्टि सबको अपने में समेटती रही। आपको आश्चर्य होगा कि ऋग्वेद (8/85/13-16) के अनुसार यमुना नदी के तट पर रहने वाला दस सहस्र सेनाओं का मालिक कृष्ण आर्यों-वैदिकों का विरोधी था जिसका आर्य पुरुष इन्द्र से युद्ध हुआ था। पीछे वह कृष्ण आर्यों का परम देवता परब्रह्म परमेश्वर हो गया। हिन्दुओं का मूल ग्रन्थ ऋग्वेद देवताओं के

नामों का एक बृहत शब्दकोश है। सर राधाकृष्णन ने लिखा है—

''मानव-मस्तिष्क रूपी कारखाने में देवमाला के निर्माण की पद्धति ऋग्वेद में जैसी स्पष्ट देखी जाती है वैसी अन्यत्र नहीं मिल सकती (भाग 1, पृ॰ 65)।'' रूप बदल करके उसका असर हिन्दू धर्म में आज भी है। हिन्दुओं को तैंतीस कोटि देवता पूजने को जब कम पड़ गये, तब उसने मुसलमानों के हसन-हुसैन, गाजी मियां आदि को भी पूजना शुरू किया।

हिन्दू समाज धर्म को लेकर कट्टरपंथी और जिद्दी नहीं है। वह मुलायम और नमनशील है। यह उसकी विशेषता है। परन्तु इस प्रकार जगह-जगह सर पटकने वाला होने से वह दिग्भ्रमित भी है। वैसे सभी संप्रदायों की अधिकतम जनता एक या अनेक देवता मानकर भ्रांति में ही सर पटकती है। इस भ्रांति से मुक्त होने के लिए जड़-चेतन का ठीक ज्ञान प्राप्त करने की महान आवश्यकता है और इसके लिए विवेकियों का संत्सग करना चाहिए।

485. प्रश्न—दामाखेड़ा गद्दी की स्थापना कब हुई? कबीरपंथ में अलग-अलग गद्दियां क्यों? इसमें प्रथम कौन है? मुख्य आचार्य कौन?

उत्तर—विक्रमी संवत 1960 के बाद श्री उग्रनाम साहेब ने दामाखेड़ा में अपना स्थान कायम किया था। अलग-अलग गद्दियां पंथ के विस्तार का सूचक हैं। सद्गुरु कबीर मुख्य आचार्य हैं और पूरा कबीरपंथ उनका अनुयायी। आश्चर्य है हर शाखा वाले अपने-अपने स्थान के प्रथम पुरुष को आचार्य मानकर सद्गुरु कबीर को भूल जाते हैं। अतएव सद्गुरु कबीर आचार्य हैं और पूरा कबीरपंथ उनका अनुगामी।

486. प्रश्न—इंसान को सच्चा सुख कब प्राप्त होता है?

उत्तर—जब उसके मन में स्वच्छता और संतोष होते हैं।

487. प्रश्न—दुनिया का सबसे बड़ा धर्म क्या है?

उत्तर—वह बरताव दूसरे के साथ न करना जो अपने को बुरा लगता हो।

488. प्रश्न—इष्ट के प्रति श्रद्धा और भय क्यों होते हैं?

उत्तर—जिनके आचरण तथा उपदेशों से जीवन में प्रेरणा मिलती है, उनमें श्रद्धा होना स्वाभाविक है। श्रद्धा की नहीं जाती, अपितु हो जाती है। जहां अधिक श्रद्धा होती है, प्रेम का उभाड़ आ जाता है। यदि श्रद्धालुओं में भय न हो तो वे इष्ट के प्रति अधिक प्रेम में पड़कर अमर्यादित व्यवहार भी करने लगते हैं, अत: भय चाहिए, परन्तु वह भय विनयशीलता एवं शिष्टाचार है, न कि डर।

489. प्रश्न—कुछ दिन साधुवेष में एवं ज्ञानमार्तंड सद्गुरु के पास रहकर भी कोई-कोई क्यों गिर जाते हैं?

उत्तर—जो लोग भावुकता में घर से निकल जाते हैं, वे साधु-मार्ग में आकर वैराग्य, भक्ति, ज्ञान आदि का पुरुषार्थ नहीं करते अत: धीरे-धीरे उनका सांसारिक चिन्तन होते-होते पतन हो जाता है। इसलिए पक्का होकर घर से निकलना चाहिए। साधु दशा में आकर वैराग्य का अभ्यास करना चाहिए। इतने पर भी यदि वैराग्य से न रह सके तो घर लौट जाना अच्छा है। साधु समाज में रहकर गंदा बनना अच्छा नहीं। जो साधु-दशा से घर में लौट गये हों, उनसे घृणा मत करो। उनसे प्रेम करो। वे भक्तिपथ में चलें। मैं तो ऐसे व्यक्ति से अधिक प्यार करता हूं।

490. प्रश्न—मन की सूक्ष्म गतियों को किस प्रकार पहचानें?

उत्तर—प्रात: शांत समय में बैठकर मन को देखें।

491. प्रश्न—जो व्यक्ति पहले बाल-बच्चों में फंस चुका है, परन्तु पीछे वैराग्य हो गया और साधु-दशा से रहने लगा, तो क्या वह इसी जीवन में मुक्त हो सकता है?

उत्तर—पहले कोई क्या रहा है इससे मतलब नहीं है किन्तु आज वह कैसे है, इससे मतलब है। शुरू से विवाहरहित लोग भी ढीले मन के तथा कमजोर वैराग्य के होते हैं और पहले के विवाहयुत रहकर पीछे से वैराग्य करने वाले भी उच्च वैराग्य से रहने वाले होते हैं जैसे महात्मा बुद्ध, भर्तृहरि, श्री काशी साहेब, श्री लाल साहेब आदि। जिसका मन आज पूर्णरूपेण राग-रहित हो गया वही मुक्त है और हर व्यक्ति अपने मन को रागरहित करने में स्वतंत्र है।

492. प्रश्न—कबीरपंथ के उपदेशक संत-महंतों का कहना है कि नारियल मोरने (फोड़ने) का कार्य सिर्फ नारियल फोड़ने का मन्त्र पाने वाले पंजाधारी साधु एवं महंत ही कर सकते हैं, दूसरा नहीं, यदि दूसरा कोई फोड़ेगा तो उसे कोटिन-कोटि जीव मारने का पाप पड़ेगा। यह सत्य है या झूठ?

उत्तर—किसी भी क्रांतिकारी महापुरुष के पीछे सब प्रकार के लोग उनके सम्प्रदाय में दीक्षित हो जाते हैं। उनमें से लचर लोग उनके सत्यपथ पर न चल पाने से नये-नये मनगढ़ंत अयुक्त फार्मूले निकालते हैं और यह सब इसलिए करते हैं कि साधारण लोगों को भूलभुलैया में रखकर उन पर किसी तरह से हावी रहा जाये। यह काम संसार के सभी महापुरुषों के पीछे उनके कुछ अनुगामियों ने किया है। कबीरपंथी कहलाने वालों में भी ऐसे लोगों की कमी नहीं है। प्रश्न ऐसे साधारण विषय पर है जिसे सभी समझ सकते हैं। कबीरपंथ तो अभी पांच सौ वर्षों का है और नारियल उसके पहले भी तोड़े और खाये जाते थे। तो क्या पहले के लोग एक नारियल तोड़कर करोड़ों जीव मारने के पाप में ही फंसते रहे? मन्त्र पढ़ लेने से नारियल तोड़ने में जीव-हत्या नहीं

होती तो मन्त्र न पढ़ने से उसमें कैसे जीव-हत्या हो जायेगी? महंत और साधु के अलावा लोगों द्वारा नारियल तोड़ने से उन्हें जीवहत्या का पाप लगता है—यह बिलकुल झूठी बात है। अत: कोई भी नारियल तोड़े और खाये, कोई अड़चन नहीं।

यदि पूजा के समय महंत एवं साधु ही नारियल तोड़ें—ऐसी वे मर्यादा बनाकर चलना चाहें, तो कोई आपत्ति नहीं। पारख सिद्धान्त में तो इसके विषय में कोई नियम नहीं। यहां तो पूजा-पाठ के समय यदि नारियल चढ़ते हैं तो उन्हें विशेषतर गृहस्थ-भक्त ही फोड़ते और बांटते हैं।

493. प्रश्न—मृतक का दाह-संस्कार करना चाहिए कि नहीं और किसी के मर जाने पर छूत लगती है कि नहीं?

उत्तर—जलाना, गाड़ना और पानी में फेंक देना—मृतक की ये तीन गतियां की जाती हैं। जब जहां जो करने में सुविधा हो वह काम ठीक है। कुछ लोगों की यह धारणा है कि लाश को गाड़ देने से, बाद में उसका जीव लाश के पास आकर भटकता है और यदि लाश जला दी गयी है तो जीव उदास होकर चला जाता है। वह वहां नहीं भटकता। इसलिए भारतीय परम्परा में बहुधा गृहस्थ की लाश को जलाते हैं और साधुओं की लाश को प्राय: गाड़ देते हैं। उसके पीछे यह धारणा है कि साधु का जीव मोह-रहित होता है, इसलिए वह पुन: लाश के पास भटकने नहीं आता। परन्तु ये धारणाएं मिथ्या लगती हैं। क्योंकि कर्मी जीव शरीर छोड़कर दूसरे शरीर के निर्माण में लगता है, वह लाश के पास भटकने नहीं आता। अत: देश-काल के अनुसार लाश को गाड़ना, जलाना या नदी में फेक देना—कुछ भी किया जा सकता है।

अब रही किसी के मरने पर घर में छूत लगने की बात। तो लाश गंदी होती ही है। उसे घर के बाहर ले जाकर उसकी अंत्येष्टि कर देने पर घर को लीप-पोत एवं धोकर साफ कर ले और उसे ले जाने वाले स्नान करके कपड़े धो लें। बस, छूत समाप्त है। अब जो पंडितों द्वारा मृतक के घर एवं कुल-गोत्र भर में 12-13 दिनों तक छूत लगाकर और उनसे महापात्र-कर्म, तेरही, सोरही एवं नितकुम आदि करवाते हैं, वह सब भूलभुलैया का काम है। किसी के घर में कोई मर गया तो उसे दुनियवी रीति-रिवाज में पड़कर उजड़ जाना पड़े, यह अच्छा नहीं है।

मृतक के घर वालों का यह कर्तव्य है कि मृतक के उपार्जित धन का एक उचित भाग किसी लोकमंगल के कार्य में लगावें। परन्तु धर्म के पुरोहितों द्वारा उनके धन का गलत ढंग से शोषण करना अनुचित है।

* * *

494. प्रश्न—जाति-प्रथा और छुआछूत क्यों नहीं मिटायी जाती?

उत्तर—जो संस्कार हजारों वर्षों से मनुष्य के मन में घर कर गये हैं, वे केवल कानून या ज्ञानोपदेश से तत्काल नहीं मिटाये जा सकते, किन्तु कानून और ज्ञानोपदेश का असर धीरे-धीरे पड़ते-पड़ते क्रमशः ही मिटाये जा सकते हैं। स्वयं सोचो, क्या अपनी संतान की शादी दूसरी जाति में करने की हिम्मत रखते हो? ऊंची जाति के कहे जाने वाले लोगों की बातें ही छोड़ो, जिनको छोटी जाति के कहते हैं उनमें से क्या हर अपने से छोटी जाति के व्यक्ति के साथ बैठकर भोजन करना चाहता है, चाहे वह शुद्ध ही क्यों न हो। अतएव जाति-पांति और छुआछूत का भूत क्रमशः ही दूर हो सकता है और वह भी सार्वभौमिक दूर होना उसी प्रकार असम्भव है जैसे पूरे विश्व के लोगों का पूरा सदाचारी हो जाना।

495. प्रश्न—महापुरुषों के नाम लेकर उनकी जय बोलाई जाती है। उसका अर्थ क्या है?

उत्तर—जय शब्द का प्रयोग जब हम बड़े पुरुषों के नाम के साथ करते हैं तब उसका अर्थ होता है प्रशंसा, महिमा।

496. प्रश्न—कबीरपंथी लोग कंठी क्यों पहनते हैं, कंठी न पहनी जाये तो क्या नुकसान है? क्या कंठी न पहनने से कबीर साहेब का ज्ञान नहीं धारण किया जा सकता?

उत्तर—कंठी दया का प्रतीक मानकर कबीरपंथ में कंठी पहनी जाती है जैसे वैष्णवों में अहिंसाव्रत पालन करने के लिए कंठी पहनी जाती है। कंठी कबीरपंथ में भक्ति का एक चिह्न मान ली गयी है। वैसे दया, अहिंसा एवं भक्ति का आचरण बिना कंठी पहने भी हो सकता है। कंठी कबीरपंथ का मुख्य धर्म नहीं है और न तो उसे पहने बिना कबीर साहेब के ज्ञान को धारण करने में कोई अड़चन ही हो सकती है। कंठी एक वेष है। शुद्ध वेष धर्म में सहायक है, यदि कोई उसका दुरुपयोग करे तो उसकी बात अलग है। कंठी, माला, तिलक, जनेऊ, काषाय (गेरुवे) वस्त्र आदि सब पंथ, सम्प्रदाय आदि के चिह्न हैं। वास्तविक धर्म एवं ज्ञान हृदय की धारणा एवं आचरण की वस्तु है। रहा, जो जिस पंथ एवं सम्प्रदाय में दीक्षित होता है, वह वहां के वेष को स्वीकार करता है। जब बहुत-सी फैशन की वस्तुएं धारण करने में अड़चन नहीं पड़ती, तो शुद्ध वेष कंठी धारण में क्या अड़चन है?

497. प्रश्न—मृत्यु जीवन का अन्त है कि नये जीवन की तैयारी?

उत्तर—वर्तमान जीवन का अन्त है और भविष्य जीवन की तैयारी। किन्तु ज्ञानी पुरुष की मृत्यु, अनंत जीवन की शुरुआत है।

498. प्रश्न—वासना को जीत लेने वाले पुरुष की देह छूटने पर क्या दशा होती है?

उत्तर—विदेह-मोक्ष। यह गुणातीत दशा है। इसकी ज्यादा व्याख्या सम्भव नहीं है। इतना ही कह सकते हैं कि यह जड़प्रकृति से भिन्न, असंग, दुखहीन एवं सदैव के लिए परम शांति दशा है। इसके लिए देह रहते-रहते सभी प्रकार के विकारों से रहित होना चाहिए।

499. प्रश्न—जीव को राम क्यों कहा जाता है?

उत्तर—क्योंकि वह प्रकृति में रमण कर रहा है।

500. प्रश्न—जिसको हम भूलना चाहते हैं, वह बारम्बार मन में क्यों आता है?

उत्तर—क्योंकि उसको तुम निषेधात्मक महत्त्व देते हो। अत: जिसे भूलना चाहो, उसको किसी प्रकार महत्त्व न दो।

501. प्रश्न—स्वप्न असत्य है, फिर देखते समय सत्य क्यों लगता है?

उत्तर—क्योंकि जागृति नहीं रहती। इसी प्रकार जो यथार्थ ज्ञान में जगा नहीं है, उसे मोह-माया के सारे सम्बन्ध सत्य लगते हैं। जाग जाने पर झूठे हो जाते हैं।

502. प्रश्न—अभ्यासकाल में मन एकाग्र हो जाता है, परन्तु उससे उठने पर चंचल हो जाता है। सदैव मन वश में रहे, इसके लिए क्या उपाय है?

उत्तर—विषयों से वैराग्य चाहिए। वैराग्य के लिए सारासार विवेक चाहिए। विवेक के लिए स्वाध्याय, सत्संग एवं सद्विचार चाहिए। इन सबके लिए लगन चाहिए।

वैराग्य के बिना अभ्यास अधूरा है। अभ्यास वैराग्याभ्यां तन्निरोध:। अभ्यास और वैराग्य से मन सदैव वश में रह सकता है।

503. प्रश्न—नामजप क्या है, उसका फल क्या है?

उत्तर—अपनी श्रद्धा के अनुसार लोग भिन्न नाम जपते हैं ॐ, राम, कृष्ण, अल्लाह, गुरु आदि। कोई भी पवित्र अभ्यास मन को एकाग्र करने में सहायक है। अंतत: सब नाम काल्पनिक हैं। जो सब नामों की कल्पना करता है, उस अपने आपको पहचानो। मन के विकारों को छोड़ो और अपने आप शुद्ध चेतन स्वरूप में ठहरो। यही सबसे बड़ा जप है।

504. प्रश्न—पापकर्म कर लेने के बाद यदि कोई गुरु की शरण में जाता है, तो क्या वह उसके कर्म के फल से बच सकता है?

उत्तर—गुरु-शरण में जाने का फल है वर्तमान में मन की पवित्रता तथा आध्यात्मिक उन्नति, और वह होती है। कर्म-फल-भोगने की चिंता हमें नहीं होनी चाहिए।

505. प्रश्न—मेरे पिताजी और गुरुजी दो रास्ते मुझे सुझा रहे हैं, जो परस्पर विरोधी हैं। मैं किस रास्ते पर चलूं, क्योंकि दोनों पूज्य हैं?

उत्तर—जो रास्ता आपको पुनीत, कल्याणकर और हितकर दिखे, उस पर चलें।

506. प्रश्न—देह छोड़कर दूसरी देह धरने के बीच समय में जीव को सुख मिलता है कि दुख?

उत्तर—वह समय देहरहित होने से न सुख है और न दुख। परन्तु देहधारण करने के सारे दुखों के बीज को वह लेकर रहता ही है, अत: वह कल्याणदशा का समय नहीं है।

507. प्रश्न—श्री धर्म साहेब विरक्त हो गये थे, परन्तु उनकी परम्परा में कितने गृहस्थ महंत गुरु बनकर दूसरे को मुक्त करने की ठेकेदारी लिए घूमते हैं और कहते हैं केवल वंश-परम्परा से ही लोगों का कल्याण है, धर्म साहेब सबसे बड़े गुरु थे। क्या समझा जाये?

उत्तर—श्री धर्मसाहेब विरक्त हो गये थे—यह बात सुनी जाती है। वे बड़े प्रतिभाशाली थे। उनके द्वारा प्रचार-क्षेत्र बढ़ा। उनके पीछे उनकी परम्परा में कुछ ऐसे लोग हुए जो गृहस्थ गुरु की प्रणाली चलाये और यह भी गढ़कर रख दिये कि कबीर साहेब ने बयालिस वंश चलाने को कहा है। पीछे कबीर साहेब के बीजक को नजरअंदाज करके गुरु कबीर और धर्मदास के संवाद के नाम पर कई पुस्तकें रची गयीं, जिनमें ज्ञान का अंश कम अपितु अतिशयोक्ति-पूर्ण महिमाओं का प्राबल्य किया गया। और इतना ही नहीं, परम तेजस्वी श्री श्रुतिगोपाल साहेब, श्री भगवान साहेब तथा श्री जागू साहेब की कीमत घटाकर आंकी गयी और बताया गया कि केवल धर्म साहेब ही गुरुत्व के अधिकारी हैं। उनकी परम्परा में गये बिना कल्याण नहीं। वंश-परम्परा को अपनी प्रचार-सफलता का इतना जोश हो गया कि वह कुछ समय के लिए अन्य सब को हीन समझने लगी। उन वाणियों का असर आज भी उनके कुछ लोगों में है।

परन्तु आज श्री धर्म साहेब की परम्परा में जो विवेकवान सन्त-महंत हैं वे ऐसा नहीं मानते। वे उक्त चारों गुरुओं का समान आदर करते हैं।

केवल श्री धर्म साहेब की परम्परा ही नहीं, ब्राह्मण, वेदांती, वैष्णव, जैन, बौद्ध, इसलामी, इसाई आदि हर सम्प्रदाय की विभिन्न शाखाओं में कुछ ऐसे

वैराग्यहीन एवं विवेकरहित गद्दीधारी होते रहे हैं जो केवल अपनी परम्परा को ही मुक्तिदाता घोषित करते रहे हैं। पंथ की दृष्टि से श्री श्रुतिगोपाल साहेब, श्री धर्म साहेब, श्री भगवान साहेब तथा श्री जागू साहेब समान आदरणीय परम गुरु हैं। इनमें कोई बड़ा-छोटा नहीं। ये महापुरुष आपस में भी अपने को छोटा तथा दूसरे को बड़ा मानते रहे होंगे। जो पद में बड़े भी रहे होंगे, वे भी दूसरों से अपने को अहंकारपूर्वक बड़ा नहीं मानते रहे होंगे। फिर हम यह कहने के अधिकारी कहां हैं कि उनमें अमुक बड़ा है और अमुक छोटा। हम सबके लिए सब समान महान हैं।

जहां तक आध्यात्मिक गुरु का प्रश्न है, उसे ब्रह्मचारी, विरक्त एवं त्यागसम्पन्न होना चाहिए। श्री धर्म साहेब की शाखा में भी अच्छे-अच्छे विरक्त संत-महंत होते रहे और आज भी होते हैं। हम आशा करते हैं कि उनमें रहने वाले गृहस्थ गुरु भी विरक्ति का पथ अपनायेंगे, जिससे गुरुत्व सही दिशा में चरितार्थ हो।

* * *

508. प्रश्न—ज्ञानी के संचित, प्रारब्ध और क्रियमाण का अभाव कैसे होता है?

उत्तर—प्रारब्ध भोगकर, संचित ज्ञान-वैराग्य के बल से और क्रियमाण दिव्य रहनी से समाप्त हो जाते हैं और ज्ञानी का तीनों कर्मों से छुटकारा हो जाता है।

509. प्रश्न—कहते हैं बिना देखे, सुने और भोगे स्वप्न नहीं होते; किन्तु मैं अनेक ऐसे सपने देखता हूं जिनके विषय में न कभी देखा, न सुना और न भोगा, फिर ऐसा क्यों?

उत्तर—जो सामान पेटी में कभी नहीं रखा गया, वह उसमें से कैसे निकल सकता है? देखे, सुने तथा भोगे हुए विषयों के स्वप्न होते हैं, भले वे बदलकर बिगड़े हुए रूप में आयें।

510. प्रश्न—स्व-स्वरूप, पारख, अस्तित्व, सारशब्द, नि:अक्षर, नि:शब्द, नि:तत्त्व—क्या एक ही वास्तविकता के बोधक हैं?

उत्तर—स्व-स्वरूप का अर्थ है अपना स्वरूप, व्यक्ति का अपना वास्तविक स्वरूप चेतन है। पारख का अर्थ है 'ज्ञान' वह चेतन का ही गुण है। अस्तित्व का अर्थ है 'सत्ता'। सत्ता जड़ और चेतन दोनों की है, अतएव सत्ता मात्र कह देने से केवल चेतन का ही बोध नहीं होता, जड़ का भी होता है। सारशब्द का

अर्थ है—'निर्णयवचन'। वह चेतन स्वरूप नहीं हो सकता। नि:अक्षर और नि:शब्द ध्वनिरहित के परिचायक हैं। इनका अर्थ यह किया जा सकता है कि अपना चेतन स्वरूप अक्षर एवं शब्द से रहित है। 'क्षर' का अर्थ 'नाश' होता है, उसमें 'अ' उपसर्ग लगा देने से अर्थ 'अविनाशी' हो जाता है। उसका अर्थ नाशवान बनाने के लिए उसमें पुन: 'नि:' उपसर्ग की आवश्यकता नहीं, अपितु 'अ' हटा देने पर 'क्षर' स्वयं नाशवान रह जायेगा। अतएव नि:अक्षर का अर्थ शब्दातीत ही करना चाहिए। नि:तत्त्व का अर्थ शून्य है। अपने चेतन स्वरूप के अर्थ में कम-से-कम हम लोग इस शब्द का प्रयोग नहीं करते। अतएव केवल शब्दों के चक्कर में न पड़कर वास्तविकता की परख होनी चाहिए।

511. प्रश्न—क्या कबीर साहेब इस संसार से सदेह सतलोक गये, यानि उनका मरा हुआ शरीर यहां नहीं पाया गया?

उत्तर—कबीर साहेब प्रारब्ध समाप्त होने पर शरीर छोड़कर अपने चेतन स्वरूप में शांत हो गये। अन्य कहीं सतलोक नहीं है। अपना चेतनस्वरूप ही सतलोक है। कबीर साहेब का शरीर अंतत: फूल हो गया, यह कहना भक्तों की अतिशयोक्ति है। वैसे मृत शरीर जल जाने पर जो अस्थि रह जाती है उसे फूल कहते हैं।

512. प्रश्न—कबीर साहेब का प्रथम शिष्य कौन था?

उत्तर—इसका पता नहीं। कबीर साहेब के बहुत शिष्य थे। उनमें किनकी दीक्षा पहले हुई थी—इसका कोई मूल्य नहीं है। सब समान श्रेष्ठ एवं आदरणीय हैं।

513. प्रश्न—विद्या का शुद्ध अर्थ क्या है?

उत्तर—अज्ञान का अन्त तथा आन्तरिक सद्‌गुणों का विकास।

514. प्रश्न—प्यार क्या है?

उत्तर—स्वार्थ त्याग। जो व्यक्ति जितना अपना स्वार्थ छोड़ सके, वह उतना जगत को शुद्ध प्यार दे सकता है।

515. प्रश्न—जो किसी पर विश्वास नहीं करता उसका क्या होता है?

उत्तर—उसका जीवन कटु हो जाता है।

516. प्रश्न—मथुरा जिले के गोवर्धन के निकट पलसी गांव में एक स्त्री अपने मृतक पति की जली हुई चिता की राख पर बैठी और उसने अपने ऊपर गंगाजल छिड़क लिया, बस अपने आप वह जल गयी। जब वह चिता पर बैठी थी, उसे एक साधु उपदेश देकर चला और कुछ दूर में गायब हो गया। यह चमत्कार कैसा है?

उत्तर—बिना आग तथा ज्वलनशील पदार्थ के संयोग के अपने आप आग नहीं लग सकती। साधु गायब नहीं हो सकता। यह सब बढ़ा-चढ़ा कर कही हुई बात है।

517. प्रश्न—शांति कहां है, घर में या बाहर?

उत्तर—शांति त्याग में है। घर में रहे या बाहर, मन के विकारों को त्यागने से ही शांति मिलेगी।

518. प्रश्न—कभी-कभी सत्य बोलना महंगा क्यों हो जाता है?

उत्तर—महंगा माल ही उत्तम होता है।

519. प्रश्न—सत्य और असत्य में क्या अन्तर है?

उत्तर—सत्य भावात्मक है और असत्य अभावात्मक। सत्य से ही कुछ काम हो सकता है, असत्य से किसी का भला नहीं हो सकता।

520. प्रश्न—जीव के बन्धनों का स्वरूप स्वतंत्र है या परतंत्र?

उत्तर—परतन्त्र। सारे बन्धन जीव के अधीन हैं। वह चाहे तो उन्हें तोड़ सकता है और चाहे उन्हें पाल सकता है।

521. प्रश्न—तुलसी का पौधा कहां रखना चाहिए?

उत्तर—निवास स्थान के पास, क्योंकि उसकी हवा फायेदमंद है। उसकी पत्ती रोज खायी जाये तो अच्छा है।

522. प्रश्न—श्रीराम व श्रीकृष्ण ईश्वर थे या नहीं। यदि नहीं थे, तो तुलसी, सूर, मीरा, सबरी किसकी भक्ति करके अविचल पद पाये? प्रहलाद और ध्रुव भी बहुत ऊंचे उठे।

उत्तर—श्रीराम और श्रीकृष्ण मानव थे। मानव के आकार में पैदा हुए संसार के सारे महापुरुष वसिष्ठ, व्यास, नारद, सनकादि, अंगिरा, बुद्ध, महावीर, ईसा, मुहम्मद, जरथुस्त्र, कनफ्यूशियस, शकंराचार्य, रामकृष्ण परमहंस, कबीर, नानक आदि सब मानव थे। मानव से बढ़कर तो कुछ है ही नहीं। महाभारत भी कहता है 'न मानुषात श्रेष्ठतरं हि किंचित्'—मनुष्य से बढ़कर कुछ नहीं। पवित्र मानव आराध्य और उपास्य हो जाता है। उसी की उपासना करके अन्य मनुष्य आगे बढ़ जाते हैं।

वस्तुत: मनुष्य अपने उत्तम चरित्र के कारण ही ऊंचे उठते हैं। उसमें उपासना एवं भक्ति का अवलम्ब जिसका भी माने। ईश्वर और अवतार—दोनों को बिलकुल न मानते हुए भी वैदिक कपिल, कणाद, जैमिनि तथा अवैदिक

बुद्ध और महावीर बहुत ऊंचे उठ गये। ऊंचे उठने के लिए आवश्यकता है अपने आप को पहचानना तथा अपने को सारी कमजोरियों से हटा लेना।

523. प्रश्न—बीजक के अनुसार जीव ने अपनी खुशी एवं आनन्द के अहंकार में पड़कर पहले शरीर धारण किया, यह कहां तक सच है?

उत्तर—जीव का देह धरना-छोड़ना प्रवाह रूप अनादि है। उसने अमुक समय में पहले आनन्द के अहंकार में पड़कर देह नहीं धारण किया। बीजक मूल में ऐसी कोई बात नहीं है। श्री पूरण साहेब की टीका में ऐसा कुछ वर्णन लगता है, परन्तु उसको समझ लेने पर भ्रम नहीं रहता। बीजक पारख प्रबोधिनी व्याख्या कबीर पारख संस्थान इलाहाबाद से मंगाकर पढ़ें, शंकाएं मिट जानी चाहिए।

524. प्रश्न—मेरे वतन के आसपास बहुत बड़ी संख्या में कबीरपंथी सज्जन हैं। उनकी अनेक बातों में परस्पर विभिन्नता है, जैसे शादी-ब्याह में उनके भिन्न-भिन्न अनेक संस्कार विधान हैं। सब अपने विधान को अच्छा कहते हैं। उनमें किसका सच मानें, एकरूपता कैसे आये?

उत्तर—इसके विषय में कबीरपंथी गृहस्थों को पहल करना चाहिए और उनको इन सब बातों में एकरूपता लाना चाहिए। वैसे अपने-अपने विधान-संस्कार को अच्छा कह सकते हैं, परन्तु दूसरे के विधान-संस्कार को बुरा कहने का किसी को अधिकार नहीं है। हां, कोई निश्चित ही गलत रूढ़ि है, तो उस पर विचार किये बिना समाज का सुधार नहीं हो सकता है।

विभिन्नता संसार का स्वभाव है। वैदिक युग में ब्राह्मणों की भिन्न शाखाओं के यज्ञ विधानों में कुछ-न-कुछ अन्तर था। यहां तक वसिष्ठ के यज्ञ-विधान का विश्वामित्र मखौल करते थे। उपनिषदों के भिन्न विचार जगजाहिर हैं, जिससे ऋषि वादरायण को ब्रह्मसूत्र में एकता दिखाने की चेष्टा करनी पड़ी। परन्तु उनके चेले उसी ब्रह्मसूत्र को लेकर द्वैत, अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, शुद्धाद्वैत, अचिंत्य भेदाभेद आदि अनेक मत स्थापित करके एक दूसरे को नास्तिक तक कहते रहे और आज भी कहते हैं। संन्यासियों में भिन्न शाखा वाले भिन्न संस्कार विधान रखते हैं। इसी प्रकार वैष्णवों की दशा है। एक हिन्दू-समाज में शादी-विवाह, पूजा-उपासना आदि में नामालूम कितने भेद हैं। इसी प्रकार दूसरे में भी समझा जा सकता है। देश, काल, समाज, महापुरुष की विभिन्नता से विभिन्न विचारों की उर्मियां संसार-समुद्र में उठती रहती हैं। जहां तक सम्भव हो एकता का प्रयत्न करना चाहिए। उपर्युक्त उदाहरणों को सामने रखकर अनेकता रहने देना उचित नहीं है। इसके लिए सभी कबीरपंथी भाइयों को इकट्ठा होकर एक उचित संस्कार-विधान चुन लेना चाहिए। पहले कहा गया कि इसके लिए विशेष

गृहस्थ सज्जनों को पहल करना चाहिए।

525. प्रश्न—कुछ कबीरपंथी मरणोत्तर काल में शव को जलाते हैं और कुछ जमीन में गाड़ते हैं। जलाने वाले उसके बाद, बारह दिनों तक घड़ा भरना, बाल बनवाना आदि विविध क्रिया-कलाप करते, सूतक मानते तथा अन्ततः तेरही करते हैं और गाड़ने वाले यह सब कुछ न करके बारह दिन पर या किसी एक दिन साधु-गुरुजनों को भोजन कराते हैं। इनमें क्या ठीक है?

उत्तर—जलाना या दफनाना जब जिस देश और काल में वहां के लोग उचित समझें वैसा कर देना ठीक है। यह अवश्य समझ लेना चाहिए कि शव को जलाने या दफनाने से जलाने या दफनाने वाले को न कोई पाप पड़ता है और न उसे सूतक लगता है।

रहा, किसी के मर जाने के बाद भोज-भण्डारा करने की बात, इसके मूल में है मृतक के पूर्व के कमाये हुए धन का कुछ अंश परोपकार में लगाने का भाव। आज भी कितने लोग मृतक कर्म के रस्मी चक्कर में पड़कर परेशान हो जाते हैं और वे कर्ज लेकर रस्म पूरी करते हैं। कितनी जातियां हैं जो किसी के मर जाने पर बिरादरी भर जुटकर कई दिन उससे कच्चे-पक्के भोजन लेकर उसे दुखी कर देते हैं और कितने लोग हैं जो अच्छे धनी-मानी हैं, परन्तु वे मृतक माता-पिता के पैसे-धन आदि को तो आपस में बांट लेते हैं और उनकी स्मृति में कोई दान-पुण्य, परोपकारादि नहीं कर पाते। ये दोनों बातें गलत हैं। मृतक के अर्जित धन के एक उचित भाग को, पीछे वाले का कर्तव्य है कि वे परोपकार तथा लोकमंगल के कार्य में लगायें।

* * *

526. प्रश्न—कितने साधु एवं महंत अपने वेष के साथ उत्तम चरित्र से संयुक्त हैं और कितने वेष के ही साधु-महंत हैं। अतः वेष का महत्त्व है कि चरित्र का?

उत्तर—महत्त्व चरित्र का है। अच्छे चरित्र के साथ साधु-वेष का भी महत्त्व है। साधु-वेष साधना में सहायक है, पवित्र-भाव उत्पादक है। यदि उसका दुरुपयोग किया जाये तो गलत है।

527. प्रश्न—जो कुछ करता है वह ईश्वर करता है, जो कुछ कर्म होते हैं, उनका कर्ता जीव ही स्वतंत्र है—ये दो कथन शास्त्रों में मिलते हैं। सच क्या है?

उत्तर—पहला कथन केवल भावुकतापूर्ण है, दूसरा वास्तविक है।

528. प्रश्न—कई पत्र-पत्रिकाओं में भूत-प्रेत की सच्ची घटनाएं छपती हैं। भूत-प्रेत, स्थूल-सूक्ष्म किसी रूप में नहीं होते—यह कैसे माना जाये?

उत्तर—अपने स्वार्थ और अज्ञान के कारण अनेक पत्र-पत्रिकाओं एवं अखबारों के सम्पादक तथा लेखक सच्ची घटना के नाम पर झूठी, जालसाजी और धोखेधड़ी की बातें करते, लिखते और छापते हैं। पढ़ और अपढ़ अधिकतम जनता अंधी है। न उसे कारण-कार्य-व्यवस्था का ज्ञान है और न तात्त्विक दृष्टि है। जड़-चेतन निर्णय तथा विवेक से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि भूत-प्रेत-योनि नाम की कोई चीज नहीं है। जीव देह छोड़ने के बाद जब तक दूसरी स्थूल देह नहीं धारण कर लेता, तब तक वह केवल सूक्ष्म शरीर से किसी के सामने प्रत्यक्ष नहीं हो सकता। अतएव भूत-प्रेत-योनि एकदम कल्पित, असत्य एवं झूठी है।

अविवेकी आदमी दृष्टि-दोष, भ्रम एवं भय-वश भूत-प्रेत मान लेता है तथा चतुर स्वार्थी लोग भूत-प्रेत का हौवा खड़ा कर समाज को बेवकूफ बनाते हैं।

529. प्रश्न—क्या आप भूत-प्रेत की घटनाओं को झूठी साबित करने की चुनौती दे सकते हैं?

उत्तर—संसार अपार है। किसके-किसके पीछे हम उनकी कल्पित घटनाओं को झूठी साबित करने के चक्कर में पड़ेंगे। तुम स्वयं समझने की चेष्टा करो। जैसा समझ पड़े वैसा मानो।

530. प्रश्न—क्या प्रतिभा अर्जित की जा सकती है?

उत्तर—प्रतिभा नये सिरे से अर्जित नहीं की जा सकती। जिसमें प्रतिभा के अंकुर हैं और किसी कारण-वश एवं अनुकूल वातावरण न पाने से वह दबी हुई है, तो अनुकूल वातावरण पाकर उद्घाटित हो जाती है। जिसे अपनी सुप्त प्रतिभा जगाने का शौक हो, वह अपने जीवन को सांसारिक झंझटों में न डालकर सरल, सहज, संयत और निष्प्रपंच रखे। उसे चाहिए कि वह एकांत-प्रेमी, एकाग्र, स्वाध्यायरत, गम्भीर-चिंतक हो तथा लेख व भाषण में अपने विचारों को सुनियोजित ढंग से प्रकट करने का अभ्यास करे या जिस दिशा में अपनी प्रतिभा का उद्घाटन करना चाहता हो, उधर एकजुट से लगनपूर्वक अभ्यास करे।

531. प्रश्न—किसी शुभ-संकल्प को कार्य रूप में बदलने के लिए दृढ़ तत्परता कैसे आये?

उत्तर—जिस कर्म में जितना लाभ निश्चय होगा, उसके पूर्ण करने में उतनी ही दृढ़ता एवं तत्परता होगी। अत: लाभ निश्चय ही तत्परता का मूल है। जिसे

पैसा कमाने में लाभ निश्चय हो जाता है, वह अपने परिवार को छोड़कर जीवन भर परदेश में पड़ा रहता है।

532. प्रश्न—जीभ की स्वादासक्ति कैसे जीती जाये?

उत्तर—पहले स्वादासक्ति से रहित होकर जो स्ववशता और स्वतन्त्रता का सुख प्राप्त होता है उसका लाभ निश्चय होना चाहिए। फिर जिस पदार्थ—मिठाई, खटाई, तिताई आदि में अपने मन में ज्यादा लोलुपता हो, उन पदार्थों को सामने प्राप्त होते हुए भी उन्हें कभी-कभी ग्रहण न करे, कभी उनमें थोड़ा ले, कभी एकदम त्याग दे। इस प्रकार विचार तथा त्याग द्वारा उनकी आसक्ति कुछ दिनों में समाप्त हो जायेगी।

533. प्रश्न—किसी डांवाडोल स्थिति में सहायता के लिए किसकी याद करे—भगवान, ईश्वर, सद्गुरु या अन्तरात्मा की, क्यों और किस प्रकार?

उत्तर—भगवान, ईश्वर, देवी-देवादि मनुष्य के मन की कल्पित धारणाएं हैं। यद्यपि इस धारणा से भी मनुष्य के दुखी मन को मनोवैज्ञानिक तथ्यानुसार कभी-कभी सन्तोष मिलता है, तथापि इससे मनुष्य अन्धकार में अधिक भटकता है। वह आत्मविश्वास छोड़कर सदैव हवा में तैरते रहना चाहता है। यदि व्यक्ति को सच्चे सद्गुरु मिल गये हैं, तो उनकी आदर्श-स्मृति से निश्चित ही अपना मनोबल ऊंचा उठता है।

वस्तुतः आत्मज्ञान, आत्मविश्वास एवं आत्मसंयम से ही हम सभी स्थितियों में पूर्ण विजयी हो सकते हैं। अपने पूर्व या आगे के कर्मों के फल हमें भोगने ही होंगे। हमें दृढ़तापूर्वक प्राप्त परिस्थिति का विश्लेषण करना चाहिए। साहसपूर्वक किसी भी स्थिति से निपटने के लिए तैयार रहना चाहिए। सारे भगवान या देवता मिलकर भी हमारा उद्धार नहीं कर सकते। हमारा उद्धार हमारे अपने उच्च कर्मों से ही सम्भव है। किसी परिस्थिति के आने पर कभी गिड़गिड़ाओ मत। आदमी मानसिक दुर्बलता एवं अविवेक-वश ही किसी प्रतिकूल दशा में डांवाडोल होता है। विवेक से समझ लेने पर समस्या नाम की कोई वस्तु ही नहीं है। वीर बनो, सिंह बनो। तुमसे बड़ा कोई भगवान नहीं। याद रखो, सारी समस्याओं के समाधान के साधन हैं—आत्मज्ञान, आत्मविश्वास एवं आत्मसयंम।

534. प्रश्न—क्या कोई ऐसी अदृश्य शक्ति है जो इस अखिल ब्रह्माण्ड का संचालन करती है और वह सर्वज्ञ तथा सर्वत्र व्याप्त है?

उत्तर—द्रव्य और गुण अभिन्न होते हैं। विश्व में दो जाति के द्रव्य मूल हैं—जड़ और चेतन। उनमें उनके गुण भी विद्यमान हैं। एक सृष्टि है जड़-

चेतनात्मक और दूसरी है केवल जड़ात्मक। प्राणियों की योनियों का जहां तक विस्तार है तथा ज्ञान-विज्ञान का क्षेत्र है—जड़-चेतनात्मक है और इसके अतिरिक्त पर्वत, नदी, झरना, असंख्य निर्जीव ग्रह-उपग्रह आदि—केवल जड़ात्मक हैं। अतएव ये असंख्य भौतिक ब्रह्मांड, जड़ द्रव्यों की अपनी अनादि सिद्ध शक्ति से चलते हैं। ये भौतिक द्रव्यों से अभिन्न हैं। इस अनन्त ब्रह्मांड की गतिविधि के मूल में किसी सर्वत्र व्याप्त सर्वज्ञ की कल्पना करना भौतिक द्रव्यों की वास्तविकता से अनभिज्ञता का फल है। जब हम असमीक्षात्मक बुद्धि के प्रवाह में बहने लगते हैं, तब स्वत: सिद्ध, स्वचालित जड़ द्रव्यों के ऊपर दैवी प्रेरणा की भोली कल्पना में उतर आते हैं। चूंकि हम सोच करके काम करते हैं, इसलिए सोचते हैं कि बादल, बिजली, असंख्य ब्रह्माण्ड भी सोचकर काम करते हैं। सर्वत्र व्याप्त, सर्वज्ञ के नाम पर ही तो दुनिया के बड़े-बड़े ईश्वरवादी मत लाखों-लाखों को तलवार-बन्दूक के घाट उतारते रहे हैं; परन्तु वह सर्वज्ञ आज तक इन घटनाओं का पता नहीं पाया, अन्यथा अपने एजेंटों—मुल्ला, पादरी, पंडितों को अवश्य सुधारा होता। आप नहीं जानते कि सर्वज्ञ ईश्वर के नाम पर ही मुसलमानों ने लाखों गैर-मुसलमानों को काट डाला, इसाइयों ने लाखों गैर-इसाइयों को जिन्दा जला दिया, तलवार से काटा तथा बन्दूक से उड़ाया, हिन्दुओं ने भी ऊंच-नीच की भावना फैला कर दूसरों को सताया। अतएव किसी सर्वज्ञ की धारणा एक व्यामोह है।

535. प्रश्न—जो पापकर्म दृश्य में आते हैं उनका फल तो न्यायिक जांच द्वारा मिल जाता है, लेकिन अदृश्य को कौन देता है?

उत्तर—कणाद ऋषि कहते हैं कि जन्मांतर में कर्मफल भोग 'अदृष्ट' से होता है। अदृष्ट का मतलब है कर्मफल देने की अदृश्यशक्ति। ऋषि जैमिनि इसी को 'अपूर्व' के नाम से पुकारते हैं। सार यह है कि जीव जब मानव देह में कर्म करते हैं, तत्काल उनके संस्कार उनके सूक्ष्म मन में अंकित हो जाते हैं और अपनी उचित योग्यता प्राप्त कर जैसे बीज से वृक्ष स्वयं होते हैं, वैसे कर्म-बीज से प्रारब्ध-फल जीव को स्वयं मिल जाते हैं। इस ढंग से कर्मक्षेत्र में कारण-कार्य की स्वत: व्यवस्था है। लहसुन-प्याज खाने पर उनकी अपनी दुर्गंधित डकार मनुष्य को स्वयं आती है तथा आम आदि सुगंधित पदार्थ खाने से वैसी डकार।

536. प्रश्न—जीव दूसरे शरीर में कैसे प्रवेश करता है?

उत्तर—कर्म-संस्कार-वश तथा माता-पिता के सम्बन्ध में वह दूसरे शरीर के रचनास्थल गर्भ में प्रवेश करता है; रस, गंधादि में जाकर अयोनिज शरीर भी धारण कर लेता है। जैसे बीज से वृक्ष होते हैं, वैसे सूक्ष्म कर्मों से देहों की प्राप्ति होती है।

537. प्रश्न—जीव का व्यास कितना है?

उत्तर—यह कल्पना के परे की बात है। जीव निश्चित ही व्यापक नहीं है। यदि व्यापक हो, तो दो नहीं हो सकते। क्योंकि एक की व्यापकता में दूसरे की उपस्थिति बाधक होगी। प्रत्यक्ष जड़-चेतन भिन्न हैं। चेतन जीव असंख्य हैं, अतएव जीव व्यापक नहीं, किन्तु अणु परिमाण हैं, बस इतना ही कहा जा सकता है, मापा नहीं जा सकता है।

538. प्रश्न—मन पर विजय कैसे हो?

उत्तर—जिस दिन इसके लिए व्याकुलता हो जायेगी, यह काम सिद्ध होने लगेगा। सद्ग्रंथ खूब पढ़ो तथा साधु संगत और ध्यानाभ्यास करो।

539. प्रश्न—सोहं और सारशब्द क्या है?

उत्तर—'सोहं' का अर्थ है 'वह मैं हूं'। अर्थात जिसको मैं खोजता हूं वह मैं स्वयं हूं। सारशब्द कहते हैं निर्णय वचन को।

540. प्रश्न—आत्मा अमर, अज, अनादि, शाश्वत एवं अविनाशी है—इस कथन की पुष्टि कैसे हो?

उत्तर—जड़ प्रकृति में चेतना नहीं है। अतएव चेतना गुण स्वतन्त्र आत्मा एवं जीव का ही है। जो दूसरे से सर्वथा भिन्न हो, वही स्वतन्त्र है। जो स्वतन्त्र है, वह शाश्वत है। जो शाश्वत है वह अज, अनादि एवं अविनाशी है।

* * *

541. प्रश्न—कल्याण-इच्छुक को शादी करना चाहिए कि नहीं?

उत्तर—जब कल्याण की पूरी इच्छा जग जायेगी, तब इस तरह प्रश्न करने की गुंजाइश ही नहीं रह जायेगी। शादी और कल्याण से कोई मतलब ही नहीं है। यदि आदमी आत्मकल्याण एवं विश्व-कल्याण करना चाहता है, तो उसे शादी से बहुत दूर रहना चाहिए। स्वतन्त्रता से ही कल्याण का कार्य सम्पादित हो सकता है। शादी तो परतन्त्रता है।

542. प्रश्न—जब जीव जागृत रूपी है, तब सुषुप्ति में वह किस अवस्था में रहता है?

उत्तर—जीव सुषुप्ति में भी जागृत रूपी है। वह उस समय भी ज्ञाता रूप ही है। इसीलिए सोकर उठने पर व्यक्ति कहता है कि मैं गाढ़ी नींद में सुख से सोया। यदि जीव गाढ़ी नींद के आनन्द में रहकर उसका अनुभव न किया होता,

तो जागकर कैसे उस आनन्द का वर्णन करता? अतएव जीव सब समय ज्ञानरूप है।

543. प्रश्न—आत्मज्ञान, अन्तर्ज्ञान एवं आत्मानुभूति किस साधन से होती है? कुछ लोग कहते हैं कि छठीं इन्द्रिय, कुछ लोग कहते हैं कि तीसरे नेत्र से वह ज्ञान होता है। सत्य क्या है?

उत्तर—छठीं इन्द्रिय तो मन ही है जो पांच ज्ञानेन्द्रियों से परे है। तीसरा नेत्र ज्ञान है। इन्द्रियों के बाद मन ही एक ऐसा साधन है जिससे अन्तर्ज्ञान प्राप्त होता है। मन के तरंग-रहित हो जाने पर अपने आप (आत्मा) का अनुभव होता है। इसके विषय में किसी विवेकी एवं साधना सम्पन्न पुरुष के पास जाकर समझना चाहिए।

544. प्रश्न—कामवासना पर विजय कैसे मिले?

उत्तर—काम-वासना एवं क्रिया की मलिनता एवं दुखरूपता की याद करो, ब्रह्मचर्य के सुख का निश्चय हो, शरीर की नश्वरता एवं सारहीनता का ख्याल रखा जाये, सद्ग्रन्थ खूब पढ़ा जाये, भोजन सादा एवं हलका किया जाये। साधु संगत करता रहे और विवेक-विचार में मन सदैव रमा रहे और इन सबके साथ कुसंग (स्त्री तथा स्त्रीलम्पट पुरुषों की संगत) का त्याग हो, तो कामवासना पर विजय अवश्य मिलेगी।

545. प्रश्न—एक धनवान, पढ़ा-लिखा और दानी व्यक्ति और दूसरा अनपढ़, निर्धन और गुरुभक्त व्यक्ति—इन दोनों में मोक्ष की राह पर कौन अग्रसर है?

उत्तर—गुरुभक्ति का मूल्य ज्यादा है, परन्तु जब यथार्थ स्वरूपबोधपूर्वक यथार्थ सद्गुरु की भक्ति हो। सार तो यह है कि पढ़-अपढ़, धनी-निर्धन कोई भी हो जो व्यक्ति शुभ मार्ग में जितना भी चलता हो उसका उसे अहंकार न हो, वही मोक्ष-पथ पर है। साधक वही है जो न अपने गुणों का अहंकार करता है तथा न दूसरे को तुच्छ देखता है। जो जितना ही निर्मान हो वह उतना ही मोक्ष पथ में अग्रसर है।

546. प्रश्न—जब परखता है तब पारखी, अन्यथा शुद्ध पारख चेतन मात्र—इसका अर्थ क्या है?

उत्तर—जीव देह में रहकर इन्द्रिय तथा मन द्वारा दृश्य-भास-पांच विषयों को जानता, परखता है; अतएव उसका नाम पारखी व द्रष्टा हैं, परन्तु जब समाधि या विदेहावस्था में उसके सामने देह, इन्द्रिय, अन्त:करण, मन, पांच विषय नहीं रहते, तब वह कुछ नहीं परखता। तब वह शुद्ध चेतन मात्र रहता

है। यही इसका अभिप्राय है।

547. प्रश्न—विविध मत के लोग यथा—जैन, बौद्ध, वेदान्ती, वैष्णव आदि अपने-अपने सिद्धान्तानुसार साधना की प्रगाढ़ता से चलकर क्या मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं?

उत्तर—संसार के भोगों से लेकर कल्पित स्वर्ग एवं ईश्वर प्राप्ति आदि समस्त कामनाओं से सर्वथा निवृत्त हुआ व्यक्ति चाहे जिस मत का हो जीवन्मुक्ति का प्रत्यक्ष सुख भोगता है। जो बंधा है, जिसमें बंधा है—इस भेद को भलीभांति जानकर तथा विजाति बन्धनों से सर्वथा छूटकर चाहे जिस मत का व्यक्ति हो, जीवन्मुक्त हो जाता है।

मोक्ष की प्राप्ति के लिए यथार्थ रहनी तथा यथार्थ बोध—दोनों की आवश्यकता है। जड़ से भिन्न चेतन अस्तित्व का ज्ञान तथा जड़ासक्ति त्यागकर स्वस्वरूप चेतन में स्थिति—मोक्ष का स्वरूप है। जो कुछ भिन्न है, उससे अपने आपको निकाल लेना ही तो मोक्ष है और यह दृष्टि प्राप्त पुरुष चाहे जिस मत का हो, मुक्त है। सत्य-स्वरूप नित्य है। अत: स्वरूपज्ञान प्राप्त करके कभी भी किसी देश-काल में व्यक्ति मुक्त होते रह सकते हैं। सत्य या मुक्ति पर किसी मत विशेष का एकाधिकार नहीं है।

किसी मत का व्यक्ति यह कहने का अधिकारी नहीं है कि दूसरे मत वाले मुक्त नहीं हो सकते। यदि सभी मत वाले अपनी-अपनी साधना से मुक्त होते हों, तो किसी सिद्धांत का अपना क्या नुकसान है? किसी भी मत का राग-द्वेष-निवृत्त व्यक्ति प्रत्यक्ष मोक्ष-सुख भोगता है। अब शरीर छूटने पर वह विदेहमुक्त होगा कि नहीं, यह देखने का विषय नहीं है। अत: इसके लिए किसी के मोक्ष को नकारा भी क्यों जाये?

हां, अपने समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम यह जानें कि दृश्य से अपना द्रष्टा चेतनस्वरूप की सर्वथा भिन्नता है और पर से सर्वथा निवृत्त होकर स्वस्वरूप में पूर्ण स्थित होना ही मोक्ष है।

हर व्यक्ति को तथ्य को उदारता से समझना चाहिए तथा स्वयं यथार्थता के धरातल पर उतरना चाहिए।

548. प्रश्न—यदि कोई हमसे नफरत करे तो हम क्या करें?

उत्तर—सहन और क्षमा ही सुख का रास्ता है।

549. प्रश्न—संत की पहचान क्या है?

उत्तर—शील, संतोष, क्षमा, दया, ज्ञान, वैराग्य आदि से सम्पन्न संत होते हैं। संत की पहचान उनकी पवित्र रहनी है।

550. प्रश्न—गुरु बड़ा है कि परब्रह्म परमात्मा?

उत्तर—गुरु प्रत्यक्ष बोधदाता और सत्प्रेरणा का स्त्रोत है। जीव से पृथक परमात्मा तो एक कल्पना का विषय है। तुम्हें निर्गुण-निराकार परमात्मा से कुछ मिलने वाला नहीं, किन्तु सगुण, साकार, सचैतन्य सद्गुरु से ही बोध प्राप्त होगा।

551. प्रश्न—पारख-समाधि में बाह्य विषयों का ज्ञान रहता है या नहीं?

उत्तर—सारे विषयों का सम्बन्ध संकल्पों से ही है और संकल्पों का सर्वथा अन्त ही पारख-समाधि है। अतएव पारख-समाधि में केवल गहरी शांति रहती है।

552. प्रश्न—मनुष्य का विचार स्थायी क्यों नहीं होता?

उत्तर—निर्णय लेने की क्षमता एवं विवेक की कमी के कारण ऐसा होता है। जीवन में वही कुछ कर सकता है जो दृढ़ निश्चयी है।

553. प्रश्न—जीव का स्वरूप क्या है तथा वह पुनः शरीर कैसे धारण करता है?

उत्तर—जीव का स्वरूप ज्ञान एवं चैतन्य है। वह कर्म संस्कारों के वशीभूत होकर उसी प्रकार पुनः शरीर धारण कर लेगा, जैसे इस वर्तमान शरीर को एक दिन धारण कर लिया था। एक शरीर छोड़कर दूसरे शरीर को धारण करने में कितनी देर लगती है, इसके नाप-जोख की कोई जरूरत नहीं है और न नापना-जोखना सम्भव ही है। पहले पिता के वीर्य में मिलकर माता के रज द्वारा गर्भ को प्राप्त होता है, यह मानने में कोई अड़चन नहीं दिखती। यह सब आंख से देखने की चीज नहीं, इसलिए अनुमान के आधार पर ही कहा जा सकता है। जीव सत्य है, उसका पुनर्देह धरना सत्य है। जो पानी की बूंद हमारे सामने अभी थी, वह भाप बनकर आकाश के किस स्थान पर स्थित है, हम नहीं बता सकते। परन्तु वह है अवश्य और समय से पुनः बूंद बनकर पृथ्वी पर आ जायेगी।

554. प्रश्न—यदि कोई भक्त बीमारी में इंजेक्शन एवं टेबलेट लेता है जिसमें अशुद्ध पदार्थ पड़ा हो सकता है, तो यह पाप है कि नहीं?

उत्तर—जिसका न मन हो वह ऐसी दवाई का सेवन न करे। यदि कोई करता है, तो इसके लिए विशेष उधेड़बुन करने की जरूरत नहीं।

555. प्रश्न—संसार में ज्ञानियों में सिरमुकुट कौन है? यदि कबीर साहेब को मानता हूं, तो लोग कहते हैं यह भी एक पक्ष हुआ, फिर क्या मानूं?

उत्तर—सत्य का पक्ष तो लेना ही पड़ेगा। कबीर साहेब की बात भी निष्पक्षता से विचारिये। संसार में चाहे कोई कितना ही बड़ा हो, जो ज्ञान आप में समायेगा, वही आपका कल्याण करेगा।

* * *

556. प्रश्न—क्या कबीर साहेब अपना रूप बालक का बना लेते थे और उनके ऊपर कथित बावन कसनियां क्या सत्य हैं?

उत्तर—जवान और बूढ़ा शरीर बालक का नहीं बन सकता। जिस समय शरीर की जो अवस्था रहती है, उस समय वही रहेगी। कबीर साहेब के विषय में कथित बावन कसनियां अतिशयोक्तिपूर्ण हैं। धार्मिक कहलाने वालों में से अधिकतम लोग अपने गुरु की मिथ्या महिमा कहने में झूठ बोलने में उदार होते हैं। राम, कृष्ण, ईसा, मूसा, मुहम्मद, बुद्ध, महावीर, कबीर, नानक आदि जो दुनिया के श्रेष्ठ मनुष्य हुए, उनको दुनिया का कर्ता-हर्ता, ईश्वर, अनन्त ब्रह्माण्ड नायक जब कह दिया गया, तब उनके लिए जितना अतिकथन किया जाये सब चल जाता है। ध्यान रहे, सर्वत्र कारण-कार्य की एक शाश्वत व्यवस्था है। उसके बाहर कुछ भी नहीं होता। सब कुछ प्रकृति-संगत होता है। अन्यथा कभी कुछ नहीं होता।

कबीर साहेब के ऊपर कसनियों के कथन का सार यही है कि उनको शासक तथा पुरोहितों द्वारा कष्ट देने की चेष्टा की गयी, परन्तु वे उसमें खरे एवं उत्तीर्ण रहे। अन्ततः विपक्षी हार मानकर शांत हुए और कबीर देव का ज्ञान भारत में छा गया। कबीर देव निश्चित ही सच्चे ज्ञानी और उच्चतम संत हुए।

557. प्रश्न—कबीर साहेब की फोटो में दाढ़ी दिखायी गयी है, फिर पारखी संत दाढ़ी का विरोध क्यों करते हैं?

उत्तर—सरकार ने जो कबीर साहेब की फोटो छापी है, उसमें ज्यादा दाढ़ी नहीं है। कहीं-कहीं उनका ऐसा भी चित्र है कि बिलकुल दाढ़ी नहीं है। इसका मतलब कबीर साहेब कभी दाढ़ी रखाये रहे होंगे और कभी मुड़ा दिये होंगे, जैसा आज भी संत-जन करते रहते हैं।

दाढ़ी रखायी जाये या मुड़ायी जाये कोई फरक नहीं पड़ता, कल्याण तो मनुष्यता एवं विवेक-वैराग्य के आचरण में है। समय के अनुसार बाहरी चीजों में परिवर्तन आता है। किसी दिन हिन्दू की चोटी का महत्त्व बहुत था। आज शिक्षित हिन्दुओं में चोटी प्रायः उड़ती जा रही है, किन्तु उनके हिन्दू होने में कोई सन्देह नहीं है। बहुत बड़े-बड़े बाल न रखना स्वच्छता एवं सरलता की दृष्टि से अच्छा ही है, इसलिए पारखी संत दाढ़ी-बाल ज्यादा नहीं बढ़ाते। वे

समय-समय पर मुड़ा देते हैं। ऐसा करने से कबीर साहेब के प्रति श्रद्धा में कमी होने का अन्दाज नहीं लगाना चाहिए।

558. प्रश्न—कबीर साहेब सांसारिक लोगों से विचित्र टोपी पहनते थे, फिर पारखी-सन्त वैसा क्यों नहीं पहनते?

उत्तर—कबीर साहेब के चित्र में जिस प्रकार की टोपी दिखायी गयी है, वैसी टोपी यदि पहनते भी रहे हों, तो भी आज वैसा न पहनने से कोई अकाज नहीं है। वैसे यह आज-कल महंतों की टोपी है और हो सकता है कभी महंतों द्वारा ही यह टोपी कबीर साहेब के चित्र में आरोपित कर दी गयी हो। कबीर साहेब के चित्र की दाढ़ी और टोपी चाहे पारखी सन्त ग्रहण करें या न करें उनके ज्ञान तथा आचरण को वे ग्रहण करते हैं और इसी में कल्याण है।

559. प्रश्न—कबीर साहेब की फोटो में तीन अंगुली खड़ी दिखाने से क्या तात्पर्य है?

उत्तर—यह उपदेश करने की मुद्रा है। उपदेश की मुद्रा में हाथ का अंगूठा और तरजनी उंगली की तोंद (अग्रभाग) सटी होती है, इसलिए अन्य तीन उंगलियां—मध्यमा, अनामिका और कनिष्ठा खड़ी हो जाती हैं।

560. प्रश्न—तत्त्व स्वचालित कैसे जबकि वे जड़ हैं?

उत्तर—यह महाभ्रम है कि तत्त्व जड़ होने से उनमें स्वयं क्रिया नहीं हो सकती, प्रत्युत उनमें जितनी क्रिया है सब किसी विराट चेतन की देन है।

तत्त्व जड़ हैं, यह ठीक है, और इसलिए उनमें चेतना नहीं है। पृथ्वी, जल, तेज, वायु, सब चेतनाहीन हैं। परन्तु उनमें क्रिया तो स्वभावसिद्ध ही है। हवा, पानी, आग आदि में स्वाभाविक क्रिया है इसीलिए उनकी योग्यता से पानी बरसता है। उनमें चेतना न होने से अतिवर्षण तथा अवर्षण भी उनके द्वारा होकर जनता को बहुत पीड़ा हो जाती है। यदि जड़तत्त्वों की स्वभावसिद्ध क्रिया न होकर वे किसी चेतन से प्रेरित होते तो वह चेतन उचित समय पर वर्षा करता और वर्षा की मात्रा भी उचित रखता। अतएव पृथ्वी आदि जड़तत्त्व स्वचालित हैं, यह तो बहुत सहज बात है। आज विज्ञान का छोटा छात्र भी इसे जानता है कि जड़तत्त्व स्वयं क्रियाशील हैं।

561. प्रश्न—किसी वस्तु को कैसे कहें कि अनादि है?

उत्तर—कोई वस्तु शून्य से नहीं आयी है। संसार में जितनी वस्तुएं हैं कारण रूप से नित्य एवं अनादि हैं और कार्यरूप से नाशवान एवं क्षणिक हैं। जीवों की देहें, घर, घड़ा, वस्त्र, वृक्ष-वनस्पति आदि कार्य पदार्थ हैं और इनका

बनना-बिगड़ना बना रहता है, परन्तु ये भी अनादि से बनते-बिगड़ते आये हैं और अनन्त काल तक बनते-बिगड़ते रहेंगे। और ये कार्य-पदार्थ जिनमें बनते-बिगड़ते हैं, वे मूल जड़तत्त्व अनादि तथा अनन्त हैं। अतएव संसार में जिन वस्तुओं की सत्ता है उन सबका सारस्वरूप अनादि है। सत का ही अस्तित्व है और सत अनादि है। इन बातों को किसी विवेकवान पारखी संत से मिलकर आमने-सामने वार्तालाप में ठीक से समझो और उसकी पुष्टि के लिए सद्ग्रन्थ भी पढ़ो।

562. प्रश्न—जब मनुष्य-शरीर के अलावा पशु, पक्षी, कृमि-कीटादि कर्म-भूमि नहीं हैं, तो वहां के जीवों से कोई नये कर्म न बनने से क्या वे शरीर छूटने पर मुक्त हो जाते हैं?

उत्तर—मुक्ति ज्ञान एवं वैराग्य का फल है, जो मनुष्य शरीर में सम्भव है। इतर खानियों में जीव अपने कर्मफल-भोगकर कभी-न-कभी मानव शरीर में आता है और यहीं से पुरुषार्थ करने पर छुटकारा होता है।

563. प्रश्न—विवेकी का कर्तव्य क्या है?

उत्तर—स्व और पर का कल्याण करना।

564. प्रश्न—अन्तर्मुख कैसे हों?

उत्तर—स्वस्वरूप को पहचानकर।

565. प्रश्न—मरते समय तक क्या चुभता है?

उत्तर—अपना पाप, प्रबल मोह और द्वेष।

566. प्रश्न—बन्धनों में कौन है?

उत्तर—जो आसक्त है।

567. प्रश्न—आसक्ति क्या है?

उत्तर—प्राणी-पदार्थों में मन का प्रबल आकर्षण।

568. प्रश्न—विषय-वासनाओं को महात्मागण दुखरूप कहते हैं, परन्तु संसार का बहुमत इसे सुखरूप सिद्ध करता है तथा उसमें लिप्त रहता है। फिर क्या मानें?

उत्तर—सत्य ज्ञान के लिए बहुमत की आवश्यकता नहीं होती। वैसे संसार का बहुमत भी यही है कि विषय-भोग दुख उत्पन्न करते हैं।

569. प्रश्न—जीव देह-विकास का कारण है या देह की बुद्धि के साथ जीव पूर्णता की ओर अग्रसर होता है?

उत्तर—देह में जीव है, तभी देह विकसित होती है और देह जितनी विकसित होती है उतना ही जीव को ज्ञान का साधन मिलता है। जीव एकरस है। मन की पूर्णता के लिए शरीर साधन है, किन्तु शरीर के विकास के लिए जीव की उसमें विद्यमानता अनिवार्य है।

570. प्रश्न—क्या विभिन्न देह धारण करने से जीव की ज्ञान-वृद्धि होती है?

उत्तर—जन्म-जन्मांतरों के संस्कार जीव के साथ अवश्य रहते हैं। इसीलिए तो एक ही माता-पिता के अनेक बच्चे अनेक प्रकार के होते हैं। कोई प्रतिभा का धनी और कोई महामूर्ख। यह होते हुए भी हमें ज्ञान-वृद्धि के लिए आज पुरुषार्थ करना चाहिए।

571. प्रश्न—जीव-जीव में भेद है कि सब जीव समान हैं?

उत्तर—सब जीव मूलत: एक समान हैं। देहोपाधि एवं कर्म-भिन्नता से सबकी योग्यताओं में भिन्नता है।

572. प्रश्न—उष्मज खानि का शरीर वासना से ही कैसे बन जाता है?

उत्तर—वासना ही से समस्त खानियों की देहें बनती हैं। फर्क इतना है कि जहां योनिज खानि में माता-पिता के रज-वीर्य भूमिका हैं, वहां अयोनिज खानि के रस, गंध आदि पदार्थ भूमिका हैं। देह धरने में वासना के साथ पदार्थ लगते हैं, वे दोनों जगह हैं।

573. प्रश्न—जीव को जाग्रत और एकरस कैसे जानूं?

उत्तर—जीव चेतन रूप एवं ज्ञानरूप है, इसलिए वह जाग्रत है। जीव के मौलिक स्वरूप में कभी कोई परिवर्तन न होने से वह एकरस है। जितना परिवर्तन है, वह मन और शरीर के क्षेत्र में है।

574. प्रश्न—मन चंचल रहता है, स्थिर कैसे करें?

उत्तर—वैराग्यवान साधु और गुरु की उपासना, सद्ग्रन्थों का स्वाध्याय और विवेक जाग्रत करके मन को स्वच्छ बनाओ। जितना मन स्वच्छ होता जायेगा उतना वह स्थिर होगा।

575. प्रश्न—कबीर का अर्थ क्या है?

उत्तर—कबीर नाम के भारत में एक महान संत हुए हैं जो सर्वविदित हैं। कबीर का शाब्दिक अर्थ 'महान' है। कबीर का सैद्धान्तिक अर्थ चेतन है। क = काया, बीर = जीतने वाला, इस प्रकार काया-मन को जीतने वाला जितेन्द्रिय कबीर है।

576. प्रश्न—पुरुषार्थ क्या है?

उत्तर—पुरुष + अर्थ = पुरुषार्थ। 'पुरि शेते पुरुषः' शरीर रूपी पुर में शयन करने वाला चेतन पुरुष है। उसका अर्थ, अर्थात प्रयोजन पुरुषार्थ है। जीव का मुख्य प्रयोजन—दुखों से छुटकारा एवं परम शांति की प्राप्ति है। पुरुषार्थ का अर्थ प्रयत्न भी है।

577. प्रश्न—जीव अखंड है या मनुष्य?

उत्तर—जीव का अर्थ शुद्ध चेतन है और वह अखण्ड है। मनुष्य का अर्थ है जीवधारी मनुष्य शरीर। शरीर तो अखण्ड नहीं हो सकता, किन्तु शरीर में रहने वाला शुद्ध चेतन ही अखण्ड है।

578. प्रश्न—लक्ष्य और लक्ष्य को प्राप्त करने वाला एक है या दो?

उत्तर—यदि लक्ष्य भौतिक है, तो निश्चित है दो हैं और यदि लक्ष्य आध्यात्मिक है, तो एक है। लक्ष्य को प्राप्त करने वाला चेतन है और लक्ष्य चेतन की अपने आप में स्थिति ही है।

579. प्रश्न—जीव परीक्षक है। क्या वह परीक्षा से पृथक है?

उत्तर—जीव का स्वरूप ही ज्ञान है, अतः देहोपाधि से परीक्षक है, किन्तु वह जिसकी परीक्षा करता है उससे भिन्न है।

580. प्रश्न—जीव को चतुष्टय से ही बोध होगा या चतुष्टय छोड़कर?

उत्तर—तार और बल्ब के बिना विद्युत का प्रकाश नहीं हो सकता, यद्यपि विद्युत तार और बल्ब से सर्वथा पृथक है। इसी प्रकार जानने-जनाने का व्यापार चतुष्टय अन्तःकरण के बिना नहीं हो सकता, यद्यपि जीव चतुष्टय अन्तःकरण से सर्वथा पृथक है।

581. प्रश्न—जीवन्मुक्ति तथा विदेहमुक्ति एक है या भिन्न?

उत्तर—भिन्न। शरीर रहते हुए शोक से सर्वथा रहित होना, जीवन्मुक्ति है और देह छूट जाने पर पुनः देह धारण न होना विदेहमुक्ति है।

582. प्रश्न—मोक्ष की प्राप्ति के लिए विवेक की प्रधानता है या वैराग्य की?

उत्तर—दोनों की।

* * *

583. प्रश्न—हिन्दू-जाति में आचार के आधार पर नहीं, जाति-पांति के आधार पर छुआछूत की मान्यता बहुत है। कबीरपंथी भी इस गलत रूढ़ि का

सर्वथा त्याग नहीं कर पाते। इसके लिए क्रांति क्यों नहीं की जाती?

उत्तर—हिन्दू धर्म के मूलग्रंथ वेदों में छुआछूत की कोई चर्चा नहीं है। उपनिषदों और महाभारत तक में छुआछूत का पता नहीं है। पुरोहितों की क्षुद्र धारणा से लिखी गयी मनुस्मृति आदि स्मृति ग्रन्थों में छुआछूत के तुच्छ विचार हैं। कबीर साहेब के ख्याल से जाति के नाते कोई अछूत नहीं। उन्होंने अपने बीजक ग्रंथ में छुआछूत का खुलकर कड़ा विरोध किया है।

हिन्दू समाज में छुआछूत की धारणा महाकोढ़ है। इसका सर्वथा विनाश होना ही चाहिए। आदमी कितना दंभी, पाखंडी और मिथ्याभिमानी है कि वह बकरे, मुरगे और कुत्ते के बच्चे को तो गोद में रखकर खेला लेगा, परन्तु दूसरी जाति के पवित्र मानव को छूने में पाप मानता है। इतना ही नहीं, वह गन्दी तम्बाकू खा लेगा, बीड़ी, सिगरेट, शराब पी लेगा और इतना ही क्या, वह मछली, बकरा, कबूतर भी खा लेगा, परन्तु पवित्र मनुष्य को जो केवल भिन्न जाति का माना हुआ है, छूने में पाप समझेगा। छुआछूत के पाखण्ड से हिन्दू समाज का घोर पतन हुआ है, परन्तु वह अभी भी अपने इस पाप से मुक्त नहीं हो पाया है। ये मिथ्याभिमानी जीव जो जाति के आधार पर दूसरे से अपने को पवित्र समझते हैं, इनके हृदय में अन्धकार के सिवा और क्या है? पवित्र व्यक्ति अछूत कहां, वह चाहे जिस जाति का हो।

कबीरपंथी भी इसका सर्वथा त्याग नहीं कर पाते। इसका कारण है कि कबीरपंथ के जितने नर-नारी हैं सब हिन्दू समाज के ही हैं जिनमें सभी वर्ग के लोग हैं। उन सबकी समझ इस विषय में एकदम परिमार्जित नहीं हो पायी है। इसके अतिरिक्त उनको रोटी-बेटी का सम्बन्ध उन्हीं हिन्दुओं में करना रहता है, इसलिए भी उनकी रूढ़िगत मान्यताओं के अनुसार उन्हें चलना पड़ता है।

कबीरपंथी सन्त जो इस जातिगत छुआछूत की निस्सारता को समझते हैं, उनमें भी प्राय: लोक-समाज की जकड़बन्दी के कारण सर्वत्र अपनी समझ को व्यावहारिक रूप नहीं दे पाते।

इस पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है कि हजारों वर्षों का कोढ़ शीघ्रातिशीघ्र एकदम नहीं समाप्त हो सकता। हम सब सही दिशा में निरन्तर पुरुषार्थ करते चलें। यह पाखण्ड टूटकर रहेगा। निरन्तर टूट रहा है। रहा-सहा कुछ दिनों में टूट जायेगा। यह अलग बात है कि कुछ राजनेता नामधारी इसे पुन: पनपाते हैं।

584. प्रश्न—वर्ण-व्यवस्था किसने बनायी और शूद्रों को किसने अछूत घोषित किया?

उत्तर—हजारों वर्ष पूर्व पेशे की दृष्टि से समाज के लोगों ने वर्ण-व्यवस्था बनायी और उस समय उसका उद्देश्य ठीक रहा होगा, परन्तु आज तो वह केवल सड़कर बदबू पैदा कर रही है। आज वर्णव्यवस्था कहां है? सभी वर्ण के लोग सभी काम कर रहे हैं। शूद्र को ही नहीं, हिन्दू समाज में सब एक-दूसरे को अछूत मानते हैं जो अज्ञान की उपज है।

585. प्रश्न—कबीरपंथ के बहुत-से सन्त-महंत पारख सिद्धांत से विमुख क्यों हैं? वे सब पारख सिद्धान्त क्यों नहीं ग्रहण करते?

उत्तर—वेदों का ज्ञानकांड उपनिषदें ही वेदों का अन्त भाग होने से वेदान्त हैं। उपनिषदों में द्वैत, अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, द्वैताद्वैत, शुद्धाद्वैत, अचिंत्य-भेदाभेद आदि अनेक दार्शनिक सिद्धान्त पैदा हुए। आश्चर्य का विषय है कि कबीर साहेब के मुख्य ग्रंथ बीजक में उक्त सभी दार्शनिक सिद्धान्तों का आरोपण विद्वानजन करते हैं। यद्यपि, बीजक पारख सिद्धान्त का मौलिक ग्रन्थ है, तथापि सन्त, महंत एवं विद्वानजनों ने उसमें नाना भिन्न दार्शनिक सिद्धान्त की जगह बना रखी है। अतएव ऐसी अवस्था में हमें यह समझना चाहिए कि संसार में सभी मनुष्य एक ही सिद्धान्त के अधिकारी नहीं होते। सभी मनुष्य अपने भिन्न विचार रखने के लिए स्वतंत्र हैं। जैसे समस्त वेदांती वेदांत के विषय में अपनी भिन्न धारणा रखने के लिए स्वतंत्र हैं, वैसे समस्त कबीरपंथी कबीर साहेब को अपनी श्रद्धा और समझ के अनुसार समझने की चेष्टा करते हैं और उसमें वे स्वतंत्र हैं। पारखी संतों-भक्तों को यह नहीं मानना चाहिए कि जो कबीरपंथी संत-महंत या भक्त पारख सिद्धांत को ज्यों-का-त्यों नहीं स्वीकारते, वे गलत हैं। कबीरदेव ने भी कहा है—

कहहिं कबीर जिन जैसी समुझी, ताकी गति भइ तैसी।

(बीजक, शब्द 78)

कबीर साहेब के बहुत-से विचार—अहिंसा, शुद्धाहार, वर्ण तथा वर्गहीन शुद्ध मानवता, सदाचार आदि सभी कबीरपंथी एक समान मानते हैं। यदि स्वरूपज्ञान के विषय में भिन्न शाखा वाले कुछ भिन्न विचार रखते हों तो उसे सहना ही पड़ेगा। फिर देश-विदेश में फैला कबीरपंथ का इतना विशाल जनसमूह जिसमें सभी योग्यता के लोग हैं, सबका दार्शनिक सिद्धांत सर्वथा एक कैसे हो सकता है?

संतोष का विषय यह है कि कबीर साहेब के सिद्धान्त 'पारख' को स्वीकार करने वाले कबीरपंथ की सभी शाखाओं में सन्त-भक्त होते आये हैं। कबीरपंथ की विविध शाखाओं में रहने वाले महान सन्त श्री गुरुदयाल साहेब, श्री रामरहस साहेब, श्री पूरण साहेब, श्री प्रयाग साहेब, श्री काशी साहेब, श्री

महाराज राघव साहेब तो धुरन्धर पारखी सन्त थे ही, काशी कबीर चौरा, धनौती, विद्दूपुर, फतुहा पारख सिद्धान्त के गढ़ रहे हैं। यहां तक कि वंश परम्परा में उत्तम पारखी संत-भक्त होते रहे। आज भी कबीरपंथ की करीब सभी शाखाओं में पारखी संत एवं भक्त पारख विचार में लीन हैं।

586. प्रश्न—कर्म भोग कर नष्ट होता है या ज्ञान से?

उत्तर—सामान्य बात यह है कि जीव जितना कर्म कर लेता है उनका फल उसे भोगना पड़ता है। अर्थात भोग करके ही नष्ट होता है, जैसे कबीर देव ने कहा है—

सुर नर मुनि औ देवता, सात द्वीप नौ खण्ड।
कहहिं कबीर सब भोगिया, देह धरे को दण्ड॥

(बीजक, साखी 295)

अब बात आती है ज्ञान की पूर्ण स्थिति की। जिनकी पूरी स्वरूपस्थिति हो गयी है, वे प्रत्यक्ष ही जीवन्मुक्त हैं, अत: उनको केवल प्रारब्ध भोग भोगना है। आगे जब उनके लिए देह रचना ही नहीं होगी, तो किसी प्रकार कर्म भोगने की क्या बात है! इसके लिए सद्गुरु कबीर कहते हैं—

तौ लौं तारा जगमगै, जौ लौं उगै न सूर।
तौ लौं जीव कर्मवश डोलै, जौ लौं ज्ञान न पूर॥

(बीजक, साखी 205)

इस साखी से साफ है कि पूर्ण ज्ञान की स्थिति जब तक नहीं होती है तभी तक जीव कर्म-वश भटकता है। ज्ञान की पूर्ण स्थिति हो जाने पर वह कृतार्थ रूप है।

587. प्रश्न—सूर्य और चन्द्रग्रहण को क्या छुआछूत मानना चाहिए?

उत्तर—बिलकुल नहीं।

588. प्रश्न—बधिक शिकार को खदेड़ता है। हमने शिकार को देख लिया। पीछे बधिक के पूछने पर उसे हम क्या बतावें?

उत्तर—हमें शिकार को नहीं बताना चाहिए। इसमें झूठ बोलना पड़े तो कोई बुरा नहीं।

589. प्रश्न—स्कूली पुस्तकों का किस तरह अध्ययन करें जिससे हम सफल विद्यार्थी बनें?

उत्तर—शुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करो, विद्यार्थी जीवन में विवाह मत करो, कुसंग न करो, सिनेमाबाज एवं दुर्व्यसनी मत बनो, माता-पिता की सेवा करो,

गुरु की मर्यादा मानो और खूब लगन से पढ़ो। सफल विद्यार्थी होने की यदि पूर्ण चेष्टा है, तो अपने आप अध्ययन में प्रवीण हो जाओगे। भूखे को भोजन करने की ट्रेनिंग नहीं देनी पड़ती।

590. प्रश्न—मन्त्र क्या है और उसका प्रभाव क्या है?

उत्तर—मन्त्र कहते हैं राय को, विचार को तथा कुछ शब्दों के समुच्चय को जिससे कोई विचार प्रकट होता है। इसका प्रभाव भी प्रत्यक्ष है। शकुनि ने दुर्योधन को मन्त्र एवं राय दिया जुआ खेलने के लिए और इस मन्त्र को युधिष्ठिर ने स्वीकारा और इसका फल पतन हुआ। कैकेयी ने दशरथ को मन्त्र दिया श्रीराम को देश निकाला का, इसका फल जो हुआ प्रत्यक्ष है। श्री तुलसीदास की पत्नी ने उन्हें मन्त्र दिया चाम से हटकर राम-भजन का और उसका फल प्रत्यक्ष है। याज्ञवल्क्य, नारद, सनत्कुमार, बुद्ध, महावीर, ईसा, मुहम्मद, शंकराचार्य, कबीर, नानक, दयानन्द, विवेकानन्द आदि ने संसार को जो अपने-अपने मन्त्र एवं राय दिये उनकी प्रतिक्रियाएं जगत में प्रत्यक्ष हैं। हां, झाड़-फूंक, टोना-टामर के मन्त्र बिलकुल झूठे हैं।

591. प्रश्न—मोक्ष तथा सत्लोक वास में क्या अन्तर है?

उत्तर—मोक्ष स्वरूपस्थिति है। चेतन की सत्ता नित्य होने से जीवन्मुक्त पुरुष का शरीर छूट जाने पर वह चेतन विदेहमुक्त होकर अपने आप स्थित है। जीवन्मुक्ति की व्याख्या हो सकती है, विदेहमुक्ति की नहीं।

सत्लोक काल्पनिक है। वह कुछ नहीं। हां, स्वरूपस्थिति ही सत्लोक है, यह बात ठीक है।

592. प्रश्न—हम गुरु के दोष जानते हैं कि उनकी संगत से संक्रामक रोग मुझे लगेगा, फिर ऐसे गुरु को त्यागने में क्या दोष लगेगा?

उत्तर—गुरु की शरण एवं संगत कल्याण के लिए है। यदि गुरु स्वयं दोषलिप्त है, तो शिष्य को उससे सावधान होना ही पड़ेगा। गुरु उपास्य होता है और जब गुरु दोषलिप्त है तो उसकी उपासना सम्भव ही नहीं। अतः ऐसी संगत से हटकर अच्छे संतों की संगत एवं उपासना करना अत्यन्त आवश्यक है। श्री रामरहस साहेब ने कहा है—

जेहि बिधि काज जीव कै होई। लाज मिटाय करै पुनि सोई॥

(पंचग्रंथी)

593. प्रश्न—पारखी का लक्षण क्या है?

उत्तर—जो हंस के समान नीर-क्षीर का निर्णय करता हो, अर्थात जो सभी पक्ष छोड़कर सत्य-असत्य की परख करता हो, जो व्यवहार में दयावान हो,

किसी के साथ कठोर व्यवहार न करता हो, जिसमें नम्रता हो, सबको यथायोग्य आदर देता हो; जो चंचलता छोड़कर अपने पद में—अपने स्वरूप में स्थिर हो—उसने ही पारख को समझा है। यथा—

नीर क्षीर निर्णय करे, हंस लक्ष सहिदान।
दयारूप थिर पद रहे, सो पारख पहिचान॥

(बीजक, पाठफल, साखी 7)

594. प्रश्न—उद्दण्ड एवं अकर्मण्य छात्रों को रास्ते पर कैसे लावें?

उत्तर—अपने स्वभाव में गम्भीरता रखो और अपना सब आचरण शुद्ध रखो। तत्पश्चात बच्चों को धमका-डराकर प्यार के बल पर रास्ते पर ला सकते हो।

* * *

595. प्रश्न—यज्ञोपवीत द्विजाति क्यों पहनते हैं?

उत्तर—नंगे बदन से यज्ञ करना मना था। गरमी में भी यज्ञ होता था। लोग उस समय कंधे पर बिना कोई कपड़ा डाले यज्ञ में बैठने लगते थे। अत: ऋषियों ने नियम किया कि यदि कोई ब्राह्मण यज्ञ में कन्धे पर 'उत्तरी' (ओढ़ना) नहीं रखा है, तो वह कन्धे में सूत डाल ले। इसलिए यज्ञ से संस्कारित करके सूत कन्धे में डालने लगे। इसीलिए उसका नाम पड़ा यज्ञोपवीत। पीछे वह कर्मकांडी ब्राह्मणों का मुख्य चिह्न हो गया। फिर जो यज्ञ करने एवं कराने के अधिकारी हुए उनको यज्ञोपवीत दिया जाने लगा। यह यज्ञ का एक चिह्न है, जो आज केवल रस्म हो गया है।

596. प्रश्न—कपिलमुनि के मन्दिर का पानी तीन दिन गंगासागर के स्नान के समय क्यों हट जाता है?

उत्तर—प्राकृतिक कारण से, किसी दैव के चमत्कार से नहीं, जैसे पूर्णिमा को समुद्र में प्राकृतिक कारण से ज्वार आता है।

597. प्रश्न—क्या कबीर साहेब की पत्नी लोई या कमाल-कमाली आदि बच्चे थे?

उत्तर—बिलकुल नहीं। यह सारा भ्रम बाहरी लेखकों ने फैलाकर कबीर साहेब के व्यक्तित्व को धूमिल करने की चेष्टा की है। कबीर साहेब के मूल ग्रन्थ बीजक, उनके मूल स्थान कबीरचौरा काशी तथा फैले हुए विशाल

कबीरपंथ से यही सिद्ध होता है कि कबीरदेव परम वैराग्यवान, त्यागी, बालब्रह्मचारी विचरणशील महात्मा थे। वे भारत तथा अन्य देशों तक में भ्रमण करते हुए काशी में रहा करते थे।

598. प्रश्न—कबीरपंथी होने के नाते खुशी या गमी के मौके पर किस ग्रन्थ का पाठ कब तथा किस विधि से करना चाहिए?

उत्तर—कबीर साहेब के मुख्य ग्रंथ बीजक का पाठ सुविधानुसार करना चाहिए। उसके साथ संतों की सेवा तथा असहायों को दान करना चाहिए।

599. प्रश्न—कबीर साहेब के मन्दिर में उनकी मूर्ति रखनी चाहिए या उनका ग्रंथ?

उत्तर—मूर्ति कदापि नहीं रखनी चाहिए। ग्रंथ रखना ठीक है; परन्तु ग्रंथ की पूजा नहीं होनी चाहिए, अपितु ग्रंथ की कथा व पाठ होना चाहिए।

600. प्रश्न—इस अनादिकाल के जगत में बन्दीछोर सद्गुरु कबीर के पहले जीव मुक्त होते थे या नहीं?

उत्तर—मुक्ति पर किसी का एकाधिपत्य नहीं है। इस अनादिकाल के जगत में जब जिसको यथार्थ स्वरूप का बोध होकर सारी विषयासक्ति छूट गयी, तब वही मुक्त हो गया। सत्य को देश और काल की सीमा से परे रहने दो। उसको किसी अमुक देश, काल एवं केवल व्यक्ति विशेष में ही मत जकड़ दो। गुरुदेव कबीर स्वयं कहते हैं, ''कहहिं कबीर सत सुकृत मिलै, तो बहुरि न झूले आन।'' (बीजक, हिण्डोला 1) अर्थात सत्य—स्वरूपज्ञान तथा सुकृत—दिव्य रहनी जिसको जब प्राप्त हुई वह भवबन्धनों से मुक्त हुआ।

601. प्रश्न—सद्गुरु कबीर का चारों युगों में संसार में अवतार लेकर आना, जो केवल पारख सिद्धान्त को छोड़कर सब कबीरपंथी मानते हैं, क्या सत नहीं है?

उत्तर—भक्त लोग बड़े भयंकर होते हैं। कबीर साहेब का मुख्य मौलिक ग्रन्थ बीजक है, उन्होंने उसमें शुरू रमैनी में ही कहा है—

तहिया हम तुम एकै लोहू। एकै प्राण बियापै मोहू॥

अर्थात हम-तुम सब मनुष्य एक ही खून से एक ही प्रकार पैदा हुए हैं। अर्थात कबीर साहेब अपने आप को एक मनुष्य मानते हैं। वे बीजक में अवतारवाद का डटकर खंडन करते हैं, तो पीछे उनके लाखों भक्त उन्हीं को अवतार घोषित करने को तुले हैं और जो कबीर साहेब को अवतार न माने उसको खरा-खोटा कहने पर भी आमादा हैं, यही है साम्प्रदायिकता।

महाराज राम तथा महाराज कृष्ण नहीं जानते थे कि हम किसी परमात्मा के अवतार हैं, अनन्त ब्रह्मांड नायक हैं और संसार के कर्ता-धर्ता हैं। चारों वेदों में, छहों शास्त्रों में तथा जिन पर स्वामी शंकराचार्यादि विद्वानों ने टीकाएं लिखी हैं प्रामाणिक प्राचीन उपनिषदों में कहीं एक लाइन भी अवतारवाद की नहीं है। लेकिन पीछे से भयंकर भक्तों ने श्रीराम और श्रीकृष्ण को प्रचण्ड अवतार सिद्ध करने का प्रयास किया और इन महापुरुषों को अवतार न मानने वालों को गाली भी दी, वेद विरोधी भी कहा, जबकि अवतारवादी स्वयं घोर वेद-विरोधी हैं, क्योंकि ऊपर बताया गया कि चारों वेदों में कहीं अवतारवाद नहीं है।

बुद्ध और महावीर नहीं जानते थे कि हम किसी लोक से आये हैं और कोई अवतार हैं, परन्तु उनके अनुयायियों ने उन्हें कैसा बनाया है, यह सर्वविदित है। यही बात ईसा तथा मुहम्मद पर है। वस्तुतः अवतारवाद तथा पैगम्बरवाद एक साम्प्रदायिकता है जो मनुष्य के क्षुद्र-हृदय की देन है और जिसके पीछे केवल कटुता है। अपने अवतार तथा पैगम्बर को न मानने वालों को हर मतवादी नास्तिक, काफिर एवं नापाक कहते हैं।

602. प्रश्न—स्वस्वरूप की पहचान कैसे हो?

उत्तर—स्वरूपबोध प्राप्त संतों की संगत करो, स्वरूपज्ञानपरक सद्ग्रन्थों को पढ़ो और विचारो कि सबका जानने वाला कौन है। जो सबको जानता है, वही अपना स्वरूप है। अर्थात भीतर जो ज्ञानज्योति जल रही है, वही अपना स्वरूप है।

603. प्रश्न—स्वरूपस्थिति कैसे हो?

उत्तर—अपना चेतन स्वरूप सारे दृश्यों से पृथक है। दृश्य-विषयों में मोह करके ही मन उनमें चिपका है। विवेक द्वारा जब उनका मोह क्षीण हो जायेगा, तब मन अनासक्त होकर अपने आप शांत हो जायेगा।

साधक को चाहिए कि वह एकांत में बैठे और मन को देखे कि वह क्या कर रहा है। मन को देखते समय यही उद्देश्य हो कि मन शांत हो जाये और मन को शांत करने के लक्ष्य से उसे देखते-देखते अवश्य उसके शांत हो जाने पर एक गहरी शांति होती है और यही स्वरूपस्थिति है। मन के सर्वथा लीन हो जाने पर वहां कोई चित्र नहीं रहता। वहां मात्र चेतन-सत्ता रहती है। अतः वहां केवल गहरी शांति है। यह स्वरूपस्थिति का स्वराज्य है। यही गुणातीत अवस्था है। यहीं पहुंचकर सारे अभावों का अन्त है। वह शेष समय निर्मल मन से स्वरूपभाव में रहता है।

604. प्रश्न—ऋग्वेद में श्रीकृष्ण की चर्चा शूरवीर के रूप में तथा वसिष्ठ की चर्चा है कि वे उर्वशी अप्सरा से पैदा हुए। तो वसिष्ठ त्रेता में हुए और

श्रीकृष्ण द्वापर में, फिर ऐसा कौन ऋषि था जो त्रेता से द्वापर तक की बात लिखता रहा?

उत्तर—लाखों-लाखों वर्षों की, युगों की कल्पना सर्वथा निराधार है। तीन-चार हजार वर्षों का ठीक से इतिहास नहीं मिलता, फिर यह कई लाख वर्षों के एक-एक युग का निर्धारण और हिसाब-किताब कौन रखता रहा? अत: चारों युग एकदम काल्पनिक हैं।

विद्वानों की धारणा है कि आज से पूर्व पांच हजार वर्ष से लेकर तीन हजार वर्ष पूर्व तक ऋग्वेद के मन्त्र अनेक ऋषियों द्वारा बनते रहे। इस प्रकार कम-से-कम दो हजार वर्षों तक नाना ऋषियों ने जो मंत्र रचे, उन्हें पीछे से संग्रहीत किया गया और उसी का नाम ऋग्वेद है। अतएव आज से तीन हजार वर्ष पूर्व तथा पांच हजार वर्ष के भीतर राम, कृष्ण, वसिष्ठ आदि सब का जीवन काल है। जब आदमी लोहा बनाना सीखा, वह काल आज से पूर्व साढ़े तीन हजार वर्ष के लगभग है। वाल्मीकि रामायण में लिखा है कि श्रीराम ने जिस धनुष को जनकपुर में तोड़ा था, वह लोहे की पेटी में बन्द था। अतएव इस ऐतिहासिक दृष्टि से भी श्रीराम का जीवनकाल आज से पूर्व साढ़े तीन हजार वर्ष के पहले नहीं ले जा सकते।

605. प्रश्न—उर्वशी अप्सरा से वसिष्ठ जी पैदा हुए ऐसा ऋग्वेद में लिखा है, यह तो ठीक है, परन्तु उनके पिता दो बताये गये मित्र तथा वरुण। दो पिता कैसे हो सकते हैं?

उत्तर—उर्वशी अप्सरा थी। वह उन्हीं दिनों मित्र और वरुण दोनों के यहां जाती और रहती थी। इसी बीच में जो उसे गर्भ रहा, वही वसिष्ठ जी हैं। उर्वशी को यह स्वयं पता नहीं था कि मेरा गर्भ मित्र से है या वरुण से। अत: ऋषियों के पूछने पर उसने मित्र तथा वरुण दोनों के नाम लिए कि दोनों में से किसी का हो सकता है। ऐसी स्थिति में ऋग्वेद में ऋषि ने मित्र और वरुण—दोनों के नाम मन्त्र में उद्धृत कर दिये 'उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठोर्वश्या।' (ऋग्वेद 7/33/11)

आप हनुमान चालीसा में यही संदिग्धावस्था हनुमान जी के पिता के विषय में पायेंगे। वे तुलसीदास जी के वचनों में शंकर-सुवन हैं, फिर केशरी-नन्दन भी हैं और तीसरे पवन-सुत हैं। बात धुंधलके में रही होगी इसलिए ऐसा कहा गया है।

606. प्रश्न—वेदव्यास तथा पराशर के पिता कौन थे?

उत्तर—वेदव्यास के पिता पराशर तथा माता केवटकन्या मत्स्यगंधा प्रसिद्ध हैं। पराशर की माता श्वपाका अर्थात श्वान पकाकर खाने वाली भंगिनि कही

जाती है। उनके पिता शक्ति हैं, जो वसिष्ठ के पुत्र माने जाते हैं। इस प्रकार वसिष्ठ के पुत्र शक्ति, शक्ति के पुत्र पराशर और पराशर के पुत्र वेदव्यास कुल चार पीढ़ी। एक पीढ़ी पचीस वर्ष की मानी जाती है। अत: ये चारों सौ वर्ष के भीतर हुए। वसिष्ठ के समय में श्रीराम तथा वेदव्यास के समय श्रीकृष्ण। सौ वर्ष में सब।

607. प्रश्न—कामादि दुर्गुण तथा दयादि सद्‌गुण कहां से पैदा होते हैं?

उत्तर—दोनों मन से। मन शुद्ध हो जाने पर दुर्गुण न पैदा होकर केवल सद्‌गुण पैदा होते हैं।

608. प्रश्न—मनुष्य-शरीर मुक्ति का दरवाजा है, परन्तु कितने कोढ़ी, पागल, गर्भ में या बालकपन में मर जाने वालों को कल्याण-साधना का अवसर नहीं मिलता, फिर उनका कल्याण कब होगा?

उत्तर—आप इन बाधाओं से मुक्त हैं। आप अपने कल्याण की चिन्ता करें। जो आज असमर्थ हैं, उनको जब चांस मिलेगा, किसी जन्म में तब वे अपना उद्धार कर लेंगे। आज जो समर्थ हैं, वे अपने कल्याण का पुरुषार्थ करें।

* * *

609. प्रश्न—क्या झूठ बोलना पाप है? मैं व्यापारी हूं। कभी मेरा पीछा चोर भी करता है। उसे उलटा बताना पड़ता है।

उत्तर—झूठ बोलना, झूठी धारणा रखना, झूठ का व्यवहार करना—यही तो सबसे बड़ा पाप है। इसीलिए तो कबीर साहेब ने कहा है—"साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप। जाके हृदया साँच है, ताके हृदया आप।" (बीजक, साखी 334)

रहा, चोर-बदमाशों से झूठ बोलकर अपना माल बचा लेना कोई पाप नहीं है। हां, पाप वहीं हो सकता है जब चोर-बदमाश तुम्हें पीटने लगें, तब तुम माल बताओ और तब माल दे देने पर भी वे तुम्हें पीटते रहें कि तुम और छिपाये होगे।

यदि तुमसे व्यवहार रखने वाले लोग तुमसे झूठ बोलकर सब व्यवहार करने लगें तो तुम दस दिन में परेशान होकर कहीं भाग जाना चाहोगे। यदि तुम्हें दूसरे द्वारा अपने तईं सत्य व्यवहार ही प्रिय है, तो तुम समझ सकते हो कि तुमसे भी लोग सत्य व्यवहार की ही आशा रखते होंगे।

610. प्रश्न—मैं आशा-तृष्णा की डोर में बंधा हूं। इसलिए खूब दुख भोग रहा हूं। इन दोषों से कैसे बचूं? गृहस्थी में रहकर इसके लिए क्या कर्तव्य हैं?

उत्तर—''मैं आशा-तृष्णा में बंध कर खूब दुख भोग रहा हूं।'' इसका पूरा अनुभव जिस समय हो जायेगा, आप उस दुख से छूटने के लिए दृढ़ प्रयत्नवान हो जायेंगे। यह जीव दुख को शत्रु मानता है। सांप-बिच्छू दुखदायी हैं—यह अनुभव होने से मनुष्य उन्हें कहां छूता है! जिसे आप गहराई से दुख जान लेंगे, उसे आप सर्वथा छोड़ देंगे। यह आप में शक्ति है। साधु संगति, सद्ग्रन्थों का स्वाध्याय तथा उसके अनुसार अभ्यास करते चलें।

611. प्रश्न—बन्धन एकतरफा है कि दोतरफा? आप कहते हैं बन्धन केवल मन का है चाहे घर में रहो चाहे बाहर। परन्तु घर-गृहस्थी में रहने वाले का सभी बन्धनों से छुटकारा कैसे होगा?

उत्तर—बन्धन एकतरफा है। केवल हम भूलवश बन्धनों को पकड़े हैं। हम छोड़ दें, तो हमें कोई नहीं पकड़ सकता। बन्धन सचमुच केवल मन की मान्यता है।

जब तक वैराग्य का परिपाक न हुआ हो, तब तक घर छोड़ देने पर आदमी अधिक उलझन में पड़ जाता है। पूर्ण वैराग्य उदय होने पर जब गृहस्थी का त्याग किया जाता है और उसके बाद भी जब सावधानी से साधना निरन्तर चलती रहे, तभी वैराग्य जीवन भर एकरस चलता है। यह ठीक है कि गृहस्थी का त्याग किये बिना पूरे बन्धन नहीं कटते परन्तु यह भी सर्वथा सत्य है कि पूर्ण वैराग्य उदय हुए बिना गृहस्थी का त्याग उलटा बन्धन बनाता है। अत: जहां पर रह रहे हो, वहां पर बन्धनों को काटने का काम करते रहो।

612. प्रश्न—साधु और महंत में क्या अन्तर है?

उत्तर—साधु वह है जो आत्मकल्याण और लोककल्याण के लिए साधना करे। महन्त उसे कहते हैं जो किसी मठ का व्यवस्थापक हो। यह हो सकता है कि कोई साधु और महन्त दोनों हो।

613. प्रश्न—भक्त को कैसे रहना चाहिए?

उत्तर—पाप की कमाई न करे, चोरी, हत्या, व्यभिचार, झूठ, ठगी, बेईमानी, मांस, शराब, अण्डा, मछली, बीड़ी, सिगरेट, गांजा, भांग, तम्बाकू आदि का त्याग रखे। अपनी कमाई के कुछ अंश यथासंभव परोपकार में लगाता रहे। साधु-संगत, सद्ग्रन्थों का अध्ययन, सेवा और सदाचार का पालन करते हुए स्वरूपज्ञान का विचार करता रहे।

614. प्रश्न—गुजरात में अधिकतम कबीरपंथी महन्त शादी भी करते हैं, फिर भी वे शिष्य बनाते हैं। क्या यह ठीक है?

उत्तर—कबीरपंथ में एक शाखा वंश परम्परा की है, जिसके महन्त विरक्त भी होते हैं, और गृहस्थ भी। नाना मत में गृहस्थ गुरु होते हैं, तो वैराग्य प्रधान

कबीरपंथ में भी एक शाखा गृहस्थ-गुरुओं की उपस्थित हो गयी। वस्तुत: गृहस्थ गुरुपद का अधिकारी नहीं। क्योंकि जो स्वयं विषय-वासना में लिपटा है, उसमें गुरुत्व कहां है? परन्तु संसार में सब कुछ चलता है। चलो, जिनके द्वारा भी जगज्जीवों का कुछ हित हो जाये, अच्छा है।

615. प्रश्न—संधि शब्द मन है और मन शब्द रूप है, क्या यह सत्य है? यदि नहीं तो सत्य क्या है?

उत्तर—प्रसंगवशात संधि शब्द का अर्थ है भ्रांतिपूर्ण शब्द। मन शब्द रूप है का अर्थ है कि शब्द से ही मन चलता है। पशु शब्द नहीं समझता तो उसका मन भी ज्यादा नहीं चलता। मानसिक विकारों का मूल शब्द ही है। इस प्रकार आपका कहना ठीक है।

616. प्रश्न—शब्द का सर्जक जीव है कि माया?

उत्तर—शब्द का सर्जक जीव है, परन्तु माया उसमें सहायक है। बिना माया की सहायता के जीव कुछ नहीं कर सकता। फिर भी जीव की विशेषता है।

617. प्रश्न—जीवन की धारा कितनी है?

उत्तर—मुख्य दो। एक बहिर्मुख अर्थात सांसारिकता। दूसरी अन्तर्मुख अर्थात आध्यात्मिक गहराई में पहुंचना।

618. प्रश्न—हंस किसे कहते हैं, वंश किसे कहते हैं? दोनों की रहनी क्या है?

उत्तर—हंस कहते हैं विवेकी को। एक विचार से 'अहंस:' के 'अ' और विसर्ग (:) लुप्त होकर हंस बन गया। अहम् = मैं, स: = वह। मैं वह हूं जो चाहता हूं—ब्रह्म, परमात्मा। अर्थात जिस ब्रह्म या परमात्मा को मैं खोज रहा था, वह मैं ही हूं। जो इस विवेक में पहुंच गया, वह जड़ की आसक्ति छोड़कर स्वरूप-विचार में रमता है।

वंश कहते हैं पुत्र को। घर-गृहस्थी का घेरा। उसकी रहनी है भक्तिधर्म के आचरण से चलना।

619. प्रश्न—कुछ लोग कहते हैं कि गुरु की पोस्ट पर रहकर पत्नी के साथ रहा जा सकता है। क्या यह सत्य है?

उत्तर—वह गुरु हो सकता है। अर्थात किसी विषय का शिक्षक। परन्तु सद्गुरु नहीं हो सकता। सद्गुरु पद, निर्विषय पद है।

620. प्रश्न—आकाश शून्य है, तो वह तत्त्व कैसा, फिर शरीर को पांचभौतिक क्यों कहा जाये?

उत्तर—आकाश अवश्य शून्य है। पारख सिद्धांत में यदि पांचभौतिक कहीं लिखा हो, तो उसका अर्थ है शब्द, स्पर्श, रूप, रस तथा गंध—इन पांच विषयों का समुच्चय। वैसे चार तत्त्वों के साथ पांचवां आकाश शरीर में है ही; अतएव तत्त्वदृष्टि से भी शरीर को पांचभौतिक कहा जा सकता है।

621. प्रश्न—क्या बकरी पालना पाप है?

उत्तर—पालना तो पाप नहीं है, परन्तु उसे मारना या कसाई के हाथों में बेचना पाप है। इसलिए भक्त लोग बकरी नहीं पालते।

622. प्रश्न—क्या शूद्र का अर्थ ऊपर के अन्य तीन वर्णों की सेवा करना अथवा अछूत है, जिसे समाज घृणा की दृष्टि से देखता है?

उत्तर—वर्णव्यवस्था के अनुसार, जिसे आप चौथा वर्ण कहते हैं जैसे कुर्मी, कुम्हार, मुराव, तेली, कलवार आदि बीसियों जातियां शूद्र ही हैं और जिनको आप अछूत कहते हैं जैसे चमार, भंगी आदि वे अतिशूद्र हैं। वर्ण-व्यवस्थानुसार ये सब वेद और विद्या के अनधिकारी हैं। परन्तु यह सब मूर्खतापूर्ण धारणा है। न कोई अछूत है और न कोई शूद्र। कुछ स्वार्थियों ने यह सब जहर फैलाकर अपना स्वार्थ साधा था। परन्तु इसका परिणाम उनका तथा पूरे देश का पतन हुआ। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र—यह सब कुछ नहीं। मानव मात्र एक समान हैं। उनमें जो पवित्र हो, वही श्रेष्ठ है। इसीलिए वेश्यापुत्र वसिष्ठ, धीवरीपुत्र व्यास, भंगिनीपुत्र पराशर, दासीपुत्र नारद आदि देवर्षि-ब्रह्मर्षि आदि कहलाये।

623. प्रश्न—पारख सिद्धान्त में ज्ञान और रहनी की पूजा होती है कि केवल वेष की?

उत्तर—ज्ञान और रहनी की ही पूजा पारख सिद्धान्त में मान्य है। यदि ज्ञान और रहनी सम्पन्न वेष है, तो वह भी पूज्य है। सद्गुरु कबीर का निर्देश है—

कर बन्दगी विवेक की, भेष धरे सब कोय।
सो बन्दगी बहि जान दे, जहाँ शब्द विवेक न होय॥

(बीजक, साखी 294)

624. प्रश्न—जब प्रारब्ध के अनुसार ही कष्ट होगा व शरीर छूटेगा, तो खतरे से सावधान रहने की क्या आवश्यकता?

उत्तर—क्योंकि खतरे से नया दुख मिल सकता है, जो प्रारब्ध में न हो।

625. प्रश्न—कभी-कभी किसी-किसी को छोटी गलती का बड़ा परिणाम भोगना पड़ता है, ऐसा क्यों?

उत्तर—कारण-कार्य की एक अटूट व्यवस्था है। उसमें अन्यथा होने की बात ही नहीं उठ सकती। हमें अन्य कोई सुख-दुख नहीं देता। हमें अपने कर्मों के ही फल भोगने होते हैं।

626. प्रश्न—कोई थोड़े दुख में कराहने लगता है और कोई भयंकर दुख में भी शांत रहता है, ऐसा क्यों?

उत्तर—हृदय की दुर्बलता और सबलता कारण है।

627. प्रश्न—जीवन की अन्तिम घड़ी दुखपूर्ण न होकर, सुख-शांतिमय हो इसके लिए क्या प्रयत्न करने चाहिए?

उत्तर—कामचलाऊ भोजन, वस्त्र, औषध और निवास का प्रबन्ध तो होना ही चाहिए। इसके अलावा आध्यात्मिक पक्ष में आवश्यक है मन का शांत रहना। यथासंभव थोड़ी और सादी वस्तुओं से गुजर करने की प्रवृत्ति, किसी से दृढ़ ममता एवं वैर न करना, सबसे मीठा वचन बोलना, मीठा व्यवहार रखना, विशेषतर जिनके साथ रह रहे हों, उनके साथ मधुरतम व्यवहार रखना, किसी के दोष-दर्शन, निन्दा एवं उखाड़-पछाड़ में न रहना, सद्ग्रन्थों का अध्ययन, समय-समय से साधु-संगत करना, स्वरूपस्थिति का अभ्यास करना और समस्त इच्छाओं का त्याग करते रहना चिरशांति के साधन हैं।

* * *

628. प्रश्न—आज-कल प्राय: देखने में आता है कि बड़े-बड़े धनी-मानी एवं पापी (जुल्मी) व्यक्तियों का हार्टफेल होकर उनकी झटपट मृत्यु हो जाती है, जबकि सारी उम्र धर्माचरण में लगे हुए व्यक्ति की मृत्यु वृद्धावस्था में एवं कष्टपूर्ण होती है। ऐसा क्यों?

उत्तर—बिलकुल ऐसी बात नहीं है। आपने कुछ लोगों को देखकर ऐसी धारणा बना ली है। आज के पापी को भी यदि जीवन के किसी हिस्से में सुख है, तो वह उसके ही कभी के पुण्यकर्मों का फल है तथा धर्माचरण सम्पन्न व्यक्ति के जीवन में यदि कहीं किसी हिस्से में दुख है, तो वह भी उसी के कभी-न-कभी के पाप-कर्मों का फल है। कारण से ही कार्य होता है, बिना कारण के नहीं।

629. प्रश्न—बहुत प्रयत्न करने पर भी सत्संग का संयोग नहीं मिलता, रोड़े पड़ जाते हैं। क्या करें?

उत्तर—प्रयत्न चलते रहें, तो सफलता होती है, आज नहीं तो कल।